ई-पत्रिका
₹ 49/-

▶ **भारत @2047**
रणनीति का दुर्ग

▶ **भारत की AI क्रांति**
और अदृश्य आदिवासी

CULT CURRENT

वर्ष: 8 अंक: 9 सितंबर, 2025

WE MAKE VIEWS

RIC

अग्निपथ ! अग्निपथ ! अग्निपथ !

नई विश्व व्यवस्था की कठिन राह

Let's 360°

- Media Consultancy
- Web solution
- Advertising
- Publication
- Languages Services
- Survey & Research
- Branding
- AV Production
- Campaign management
- Event organizer
- PR partner, PR associate
- Content writer & provider
- Media analyst

URJAS MEDIA VENTUE IS PERHAPS THE ONLY CONSULTING FIRM THAT CAN GIVE YOUR ORGANISATION A 360 DEGREE MEDIA BUSINESS GROWTH CONSULTING THROUGH IT'S 360 CAPABILITIES. FOR US, CONSULTING DOES NOT ONLY MEAN MECHANICAL COST REDUCTION THROUGH BETTER IT APPLICATIONS, WE FIND OUT WHAT YOUR ORGANISATION REALY NEEDS AND GIVE YOU AN INTELLECTUAL SOLUTION THAT HELP YOU REDUCE COST AS WELL AS HELPS YOURS BUSINESS GROW AND BEAT THE COMPETITION.

NOW!! OUR CONSULTANT WILL GET BACK TO YOU IN 24 HOURS AND PUT YOU IN TO THE HIGH GROWTH PATH

URJAS MEDIA
VENTURE

BEAT THE COMPETITION

www.urjasmedia.com

SMS 'BUSINESS GROWTH'
TO +91-8826-24-5305 OR
E-MAIL info@urjasmedia.com

गुमनाम नायक

गांव की गोद से निकली सफलता की कहानी

हरिओम नौटियाल

हरिओम नौटियाल की कहानी सच में मिसाल है। कभी बड़े शहर की चमक-दमक और आरामदायक नौकरी का प्रतीक रहे हरिओम ने जब गांव लौटने का फैसला किया तो लोग उन्हें पागल कहने लगे। लेकिन खेती-बाड़ी और गांव से अपने गहरे जुड़ाव ने उन्हें राह दिखाई। उन्होंने साबित कर दिया कि असली ताकत शहर में नौकरी ढूँढने में नहीं, बल्कि गांव में रोजगार बनाने में है। देहरादून के उनके छोटे-से डेयरी बिज़नेस ने आज देशभर की नामी कंपनियों और निवेशकों का ध्यान खींचा है। उनकी सफलता ने अनगिनत युवाओं को प्रेरित किया है, जो अब खुद का डेयरी बिज़नेस शुरू कर रहे हैं। यह कहानी सिर्फ उद्यमिता की नहीं, बल्कि गांव और मिट्टी से जुड़े रहने की शक्ति की है। ●

संपादकीय

राष्ट्रीय संपादक
संजय श्रीवास्तव

संपादक
श्रीराजेश

प्रबंध संपादक
सच्चिदानंद पाण्डेय

रोमिंग संपादक
डॉ. राजाराम त्रिपाठी

राजनीतिक संपादक
अंशुमान त्रिपाठी

मेट्रो संपादक
शक्ति प्रकाश श्रीवास्तव
डॉ. रुद्र नारायण

अंतर्राष्ट्रीय संपादक
श्रीश पाठक

कारपोरेट संपादक
गगन बत्रा

खेल संपादक
जलज श्रीवास्तव

डिजीटल संपादक
सुनीता त्रिपाठी

सहायक संपादक
संदीप कुमार

उप संपादक
मनोज कुमार
संतु दास

साहित्य संपादक
अनवर हुसैन

कला संपादक
जया वर्मा

वेब एवं आईटी विशेषज्ञ
अनुज कुमार सिंह

फोटो संपादक
विवेक पाण्डेय

विशेष संवाददाता
कमलेश झा
विकास गुप्ता

संवाददाता
संदीप सिंह
अनिरुद्ध यादव

ब्यूरो प्रमुख (अंतर्राष्ट्रीय)
अकुल बत्रा (अमेरिका)
सी.शिवरतन (नीदरलैंड)
जी. वर्मा(लंदन)
डॉ. मो. फहीम अकबर (पाकिस्तान)
ए. असगरजादेह (ईरान)
डॉ. निक सेरी (मलेशिया)

ब्यूरो प्रमुख (राष्ट्रीय)
आर. रंजन (नई दिल्ली)
संजय कुमार सिंह (लखनऊ)
कैप्टन सुधीर सिन्हा (रांची)
निमेष शुक्ल (पटना)
नागेन्द्र सिंह (कोलकाता)
राकेश रंजन (गुवाहाटी)

विपणन
सत्यजीत चौधरी
महाप्रबंधक

ऑनलाइन प्रसार
सृजीत डे

वर्षः 8 अंकः 9 सितंबर, 2025

Follow us:
fb.com/cultcurrent @Cult_Current cultcurrent@gmail.com

URJAS MEDIA VENTURE
Head office: Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109, INDIA, Tel: +91 6289-26-2363
Corporate Office: 14601, Belaire Blvd, Houston, Texas 77083 USA Tel: +1 (832) 670-9074
Web: http://cultcurrent.in

Cult Current is a monthly e-magazine published by Urjas Media Ventures from Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109.
Editor: Srirajesh

Disclaimer: All editorial and non-editorial positions in the e-magazine are honorary. The publisher and editorial board are not obligated to agree with all the views expressed in the articles featured in this e-magazine. Cult Current upholds a commitment to supporting all religions, human rights, nationalist ideology, democracy, and moral values.

डिस्क्लेमर

Cult Current के इस अंक में प्रकाशित सामग्री, चित्र, आंकड़े और विश्लेषण तैयार करने हेतु आधुनिक कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) टूल्स जैसे ChatGPT, Google AI Studio आदि का आंशिक उपयोग किया गया है। प्रस्तुत जानकारी को शोध, रिपोर्टिंग और रचनात्मक उद्देश्य से संकलित किया गया है। यद्यपि सभी तथ्यों और आंकड़ों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है, फिर भी किसी भी प्रकार की त्रुटि या असंगति के लिए प्रकाशन उत्तरदायी नहीं होगा। पाठकों से आग्रह है कि वे इन सामग्रियों को संदर्भ के रूप में लें और स्वतंत्र रूप से सत्यापन करें।

CON

COVER STORY 24

ब्रोमांस की राख पर नया ग्लोबल भूचाल 30

ट्रंप के टैरिफ से अहम साझेदारी... 38

12

अकाल असली गुनाहगार कौन? 16

ट्रंप की क्लास व यूरोप की चुप्पी 22

ढाका की नई करवट 42

क्या होगा भारतीय फार्मा का भविष्य 46

भारत @2047 रणनीति का दुर्ग 50

भारत की AI क्रांति और अदृश्य आदिवासी 52

युद्धक्षेत्र में AI, किस दिशा में देख रही दुनिया? 56

तेल का खेल और भारत की रणनीति 52

भारत का युद्धक टैंक भविष्य का संतुलन 60

साझा जल, विभाजित भविष्य 64

तकनीक ही बनेगा तारनहार 68

शांति का मायाजाल 70

दमिश्क से कंधार तक बदलाव या दोहराव ? 74

76

एल्विश-माहिरा

रील या रियल?

Small talk

अंजलि का धमाका: छोड़ी भोजपुरी दुनिया

हरियाणवी स्टार अंजलि राघव ने भोजपुरी इंडस्ट्री को झटका देते हुए बड़ा ड्रामेबाज़ी भरा फैसला लिया। वह 'संईया सेवा करे' प्रमोशनल इवेंट में पवन सिंह द्वारा स्टेज पर बिना अनुमति के कमर छूने की घटना से शर्मसार और आहत हुईं। सोशल मीडिया पर वीडियो वायरल होने के बाद, उन्होंने इंस्टाग्राम पर भावुक वीडियो शेयर कर कहा—"यदि सार्वजनिक रूप से कोई ऐसा छूता है, तो क्या मैं खुद खुशी से झूमती रहूंगी?" उन्होंने बताया कि पवन सिंह का पीआर ड्रामा उन्हें चुप रहने के लिए दबाव डाल रहा था। इस सब से दुखी होकर उन्होंने भोजपुरी दुनिया को अलविदा कह दिया और अब हरियाणवी इंडस्ट्री पर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगी। ●

2025 में तहलका मचाने वाली खोजें

ओमेगा फैटी एसिड और अल्ज़ाइमर

नवीन शोध से पता चला है कि महिलाओं में ओमेगा फैटी एसिड अल्ज़ाइमर से सुरक्षा दे सकते हैं। अध्ययन में पाया गया कि अल्ज़ाइमर से पीड़ित महिलाओं के रक्त में असंतृप्त वसा, विशेषकर ओमेगा फैटी एसिड, की कमी पाई गई, जबकि पुरुषों में यह अंतर नहीं दिखा। यह संकेत है कि महिलाओं में मस्तिष्क स्वास्थ्य बनाए रखने में वसा की भूमिका अलग हो सकती है। यही कारण हो सकता है कि अल्ज़ाइमर के अधिक मामले महिलाओं में सामने आते हैं। ●

मिथक से विज्ञान तक!

1 जनवरी 1995 को उत्तरी सागर में ड्रौप्नर ऑयल प्लेटफ़ॉर्म से टकराई 80 फुट ऊँची लहर ने इतिहास बदल दिया। इसने स्टील रेलिंग मोड़ दी, भारी उपकरण उछाल दिए और सबसे अहम—पहली बार खुले समुद्र में 'रोग वेव' का सटीक रिकॉर्ड मिला। सदियों से नाविक जिन रहस्यमयी लहरों का ज़िक्र करते थे, वे अब मिथक नहीं रहीं। फ्रांसेस्को फेडेले की टीम ने 18 वर्षों के 27,500 रिकॉर्ड खंगालकर इनके बनने की नई समझ प्रस्तुत की। ●

छिपे ब्लैक होल का संकेत!

जीडब्ल्यू 190814 से मिले गुरुत्वाकर्षण तरंगों के अध्ययन ने संकेत दिए हैं कि पास ही एक अज्ञात महाविशालकाय ब्लैक होल मौजूद हो सकता है। शंघाई एस्ट्रोनॉमिकल ऑब्ज़र्वेटरी के डॉ. वेनबियाओ हान के नेतृत्व में हुए शोध के अनुसार यह घटना केवल दो ब्लैक होल के विलय से नहीं, बल्कि संभवतः तीसरे छिपे कॉम्पैक्ट ऑब्जेक्ट के प्रभाव में हुई। यह खोज 'बाइनरी ब्लैक होल' के बनने की प्रक्रिया पर नई रोशनी डालती है और ब्रह्मांड की गुत्थियों को सुलझाने की दिशा में महत्वपूर्ण संकेत देती है।। ●

डीएनए से बने नैनो-स्काईस्क्रेपर

कोलंबिया यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिक डीएनए को आधार बनाकर जटिल और कार्यशील नैनोमैटेरियल्स तैयार कर रहे हैं। प्रकृति की डिज़ाइन प्रक्रिया से प्रेरित टीम ने डीएनए को 'वॉक्सेल-आकार' के ढाँचों में प्रोग्राम किया, जो अन्य नैनो घटकों को संगठित कर सकते हैं। इससे प्रकाश-परावर्तक क्रिस्टल, लघु इलेक्ट्रॉनिक्स और मस्तिष्क जैसी सर्किटें बनाना संभव हुआ है। प्रो. ओलेग गैंग के अनुसार, यह तकनीक नैनोस्तर पर 'एम्पायर स्टेट बिल्डिंग' जैसी जटिल संरचनाएँ आत्म-संगठन से खड़ी करने की दिशा में एक बड़ा कदम है।। ●

टाटा का 9-सीटर व्यावसायिक MPV लॉन्च

टाटा मोटर्स ने 29 अगस्त, 2025 नई Winger Plus 9-सीटर कमर्शियल MPV भारत में लॉन्च की है, जिसकी शुरुआती एक्स-शोरूम कीमत 20.60 लाख निर्धारित की गई है । यह वाहन व्यापारिक यातायात क्षेत्र की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया है और इसमें आधुनिक सुविधाएँ और बेहतर संचालन क्षमता की उम्मीद की जाती है। ●

नियुक्ति

डॉ. ऊर्जित पटेल, ईडी, आईएमएफ

29 अगस्त 2025 को आरबीआई के पूर्व गवर्नर डॉ. ऊर्जित पटेल को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का नया कार्यकारी निदेशक नियुक्त किया गया। उन्होंने यह पदभार तीन वर्ष की अवधि के लिए संभाला है। पटेल, जो भारत के साथ बांग्लादेश, श्रीलंका और भूटान सहित पूरे निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करेंगे।

इस्तीफा

गिरिश कौशगी, सीईओ, पीएनबी हाउसिंग फाइनेंस

गिरिश कौशगी ने पीएनबी हाउसिंग फाइनेंस में मुख्य कार्यकारी अधिकारी के पद से इस्तीफा दे दिया। वे कंपनी के रणनीतिक और वित्तीय संचालन में लंबे समय से महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। उनके इस्तीफे का समय कंपनी के ऊपर निवेशकों की बढ़ती चिंताओं और वित्तीय योजनाओं की समीक्षा के बीच आया है।

उन्होंने कहा

पीटर नवरो
व्यापार सलाहकार, अमेरिका

"भारत द्वारा रुस से तेल की खरीद एक प्रकार से 'मोदी का युद्ध' है। वास्तव में, शांति की राह नई दिल्ली से होकर निकलती है।"

विकास स्वरूप
पूर्व राजनयिक, भारत

"भारत हमेशा अपनी रणनीतिक स्वायत्तता का पालन करता है और किसी भी देश के दबाव में नहीं होगा। ऐसे बयान द्विपक्षीय संबंधों के लिए हानिकारक हैं।"

श्रद्धांजलि

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन
(05/09/1888-17/04/1975)

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन भारत के महान दार्शनिक, शिक्षक और राजनेता थे, जिनका जीवन शिक्षा और नैतिक मूल्यों के प्रति समर्पण का अद्भुत उदाहरण है। तमिलनाडु के तिरुत्तनी में जन्मे राधाकृष्णन ने शिक्षा के क्षेत्र में अपने करियर की शुरुआत एक शिक्षक के रूप में की और जल्दी ही अपने शिक्षण कौशल और गहन चिंतन के लिए प्रसिद्ध हो गए। वे शिक्षकों के प्रति गहरी श्रद्धा रखते थे और हमेशा मानते थे कि शिक्षक समाज का सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। उनका यह दृष्टिकोण इतना प्रेरक था कि भारत में शिक्षक दिवस हर साल उनके जन्मदिन, 5 सितंबर को मनाया जाता है।

राधाकृष्णन ने दर्शनशास्त्र में विशेष रुचि ली और भारतीय दर्शन को पश्चिमी दुनिया के सामने प्रस्तुत किया। उन्होंने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय सहित कई अंतरराष्ट्रीय शिक्षण संस्थानों में भारत के दर्शन और संस्कृति का प्रचार किया। शिक्षा और ज्ञान को अपने जीवन का मूल उद्देश्य मानने वाले राधाकृष्णन का मानना था कि शिक्षा केवल सूचना का संचय नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण और नैतिक विकास का मार्ग है। राजनीतिक क्षेत्र में भी उनका योगदान अद्वितीय रहा। वे भारत के पहले उपराष्ट्रपति और दूसरे राष्ट्रपति बने और अपने सरल, ईमानदार और दूरदर्शी नेतृत्व के लिए याद किए जाते हैं। उनका जीवन यह सिखाता है कि ज्ञान और नैतिकता का संयोजन समाज में सच्चे नेतृत्व का आधार है। राधाकृष्णन का जीवन प्रेरणा देता है कि शिक्षा के प्रति लगन, नैतिकता का पालन और समाज के कल्याण की प्रतिबद्धता किसी भी व्यक्ति को असाधारण ऊँचाइयों तक ले जा सकती है। उनके विचार और कार्य आज भी शिक्षकों, छात्रों और समाज के हर वर्ग के लिए प्रेरणास्त्रोत हैं। ●

मोदी-शी जिंपिंग की मीटिंग से भारत-चीन संबंधों में आई नई गर्मजोशी

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और चीनी राष्ट्रपति शी जिंपिंग ने तियानजिन में एससीओ शिखर सम्मेलन के दौरान मुलाकात की। यह मोदी का चीन का पहला दौरा 2018 के बाद है। दोनों नेताओं ने सीमा तनावों के बाद संबंधों को स्थिर करने पर चर्चा की। मोदी ने सीमा पर शांति और स्थिरता की पुष्टि की और कैलाश मानसरोवर यात्रा व प्रत्यक्ष उड़ानों की बहाली का उल्लेख किया। दोनों पक्षों ने सीमा प्रबंधन, व्यापार और ब्रिक्स अध्यक्षता के समर्थन जैसे कदमों पर सहमति जताई। चीन ने अमेरिकी 50% शुल्कों के खिलाफ भारत का समर्थन किया। इसके साथ ही भारत, चीन और रूस के वरिष्ठ अधिकारियों ने रूस-भारत-चीन संवाद को पुनर्जीवित करने की संभावनाओं पर चर्चा की, जो बहुपक्षीय विश्व व्यवस्था को सुदृढ़ करने का उद्देश्य रखता है। ●

क्या कॉर्पोरेट अमेरिका पर नियंत्रण बढ़ा रहे हैं ट्रंप?

डोनाल्ड ट्रंप ने अमेरिका में इंटेल में हिस्सेदारी लेने का वादा किया, जिससे व्यापार समुदाय में चिंता बढ़ गई है। यह कदम घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देने और चीन पर निर्भरता कम करने के प्रयास के तहत किया गया है। समर्थक इसे राष्ट्रीय सुरक्षा और रोजगार सुरक्षा के लिए प्रभावी नीतिगत कदम मानते हैं, जबकि आलोचक सरकार और निजी कंपनियों के बीच संबंधों में हस्तक्षेप बढ़ने की चेतावनी दे रहे हैं। इसके साथ ही, बांग्लादेश ने रोहिंग्या शरणार्थियों के बोझ पर चिंता जताई और मांस की कीमतें रिकॉर्ड स्तर पर पहुंच गई हैं। ●

यूरोपीय संघ में इस्राएल पर प्रतिबंध को लेकर मतभेद

गाजा में मानवीय संकट को लेकर यूरोपीय संघ इस्राएल के खिलाफ कार्रवाई पर दो हिस्सों में बंट गया है। कोपनहेगन में शनिवार को हुई विदेश मंत्रियों की बैठक बेनतीजा रही। यूरोपीय आयोग ने इस्राएल की कंपनियों को रिसर्च फंड रोकने की सिफारिश की थी, जबकि जर्मनी सहित कुछ देशों ने इसे मंजूर नहीं किया। जर्मनी के विदेश मंत्री योहान वाडेफुल ने कहा कि आयोग के प्रस्तावित कदम गाजा पट्टी में इस्राएल की गतिविधियों पर असर नहीं डालेंगे। ●

मोज़ाम्बिक: आर्थिक सुधार के लिए निवेश आमंत्रित

मोज़ाम्बिक की राजधानी मापुटो में 60वां मैपुटो इंटरनेशनल ट्रेड फेयर शुरू हुआ, जिसमें 30 देशों के 3,000 से अधिक प्रदर्शक हिस्सा ले रहे हैं। गाजा प्रांत की उद्योग और वाणिज्य निदेशक लूसिया माटिमेले ने कहा, "हमारे पास भूमि, पानी और किसान हैं, जरूरत है निवेश की।" राष्ट्रपति डैनियल चापो ने विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करने और समावेशी, सतत स्थानीय अर्थव्यवस्था बनाने पर जोर दिया। यह आयोजन खाद्य सुरक्षा, रोजगार और आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करता है। ●

अमेरिकी टेक कंपनियां परेशान, यूरोपीय कानून सख्त

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने उन देशों पर नए शुल्क लगाने की धमकी दी हैं जो अमेरिकी टेक कंपनियों की शक्ति सीमित कर रहे हैं। यूरोपीय संघ के डिजिटल मार्केट्स एक्ट और डिजिटल सर्विसेज एक्ट के तहत मेटा, एप्पल और गूगल जैसी कंपनियों पर भारी जुर्माने लगाए गए हैं। ये कानून अवैध कंटेंट, गलत सूचना और खतरनाक सामग्री के खिलाफ सख्त कार्रवाई के लिए प्लेटफॉर्मों को बाध्य करते हैं। ●

जर्मनी में स्वैच्छिक सैन्य सेवा लौटाने की तैयारी

27 अगस्त को जर्मनी की कैबिनेट ने स्वैच्छिक सैन्य सेवा की शुरुआत के लिए बिल पेश करने की मंजूरी दी। चांसलर फ्रीडरिष मैर्त्स ने इसे "सैन्य सेवा आधारित सेना की ओर लौटना" करार दिया। रक्षा मंत्री बोरिस पिस्टोरियस ने कहा कि युवा स्वैच्छिक आधार पर सेना में भर्ती होंगे, लेकिन पर्याप्त भागीदारी न मिलने पर इसे अनिवार्य सेवा में बदला जा सकता है। राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद के गठन व यूरोप में बढ़ती सुरक्षा चुनौतियों के मद्देनजर यह कदम उठाया गया है। बिल अब बुंडेसटाग में पेश होगा। ●

ट्रंप के टैरिफ से ब्रिक्स की एकजुटता बढ़ी

डोनल्ड ट्रंप ने ब्रिक्स देशों पर टैरिफ लागू कर वैश्विक आर्थिक परिदृश्य में हलचल पैदा कर दी है। चीन पर 145%, भारत और ब्राजील पर 50% और दक्षिण अफ्रीका पर 30% शुल्क लगाए गए हैं। भारत पर यह टैरिफ रूस से सस्ता तेल खरीदने को लेकर लागू किया गया। ट्रंप का दावा है कि यह कदम अमेरिका-विरोधी नीतियों को रोकने और अमेरिकी हितों की रक्षा के लिए जरूरी हैं। हालांकि विशेषज्ञ मानते हैं कि इन उपायों से ब्रिक्स देशों में साझा रणनीति और आपसी एकजुटता मजबूत हुई है। सदस्य देश आपसी व्यापार में राष्ट्रीय मुद्राओं का इस्तेमाल बढ़ा रहे हैं और डॉलर पर निर्भरता कम कर रहे हैं। भारत, चीन और रूस की बढ़ती निकटता अमेरिका की वैश्विक ताकत के लिए चुनौती बन रही है। यह एकजुटता आगामी शंघाई सहयोग संगठन शिखर सम्मेलन में साफ दिखाई देगी, जहां पीएम मोदी सात साल में पहली बार चीन के दौरे पर रहेंगे। ●

अमेरिकी अदालत: ट्रंप का टैरिफ अवैध

एक अमेरिकी अपीलीय अदालत ने राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की व्यापक टैरिफ नीति को अधिकांशतः अवैध करार दिया। अदालत ने मई के निर्णय को बरकरार रखा, जिसमें कहा गया था कि ट्रंप ने सभी व्यापारिक साझेदारों पर टैरिफ लगाने का अधिकार ओवरस्टेप किया। ट्रंप ने अंतरराष्ट्रीय आपातकालीन आर्थिक अधिकार अधिनियम का हवाला दिया था, लेकिन अदालत ने इसे राष्ट्रीय आपातकाल के दायरे में नहीं माना। सात-चार के फैसले में टैरिफ को अवैध बताया गया। ●

दक्षिण अफ्रीका ने जी 20 के लिए वैश्विक असमानता समिति शुरू की

दक्षिण अफ्रीका की जी20 अध्यक्षता ने "एक्सट्रानारी कमेटी ऑफ इंडिपेंडेंट एक्सपर्ट" लॉन्च किया है, जिसका उद्देश्य वैश्विक संपत्ति और आय असमानता पर पहला व्यापक रिपोर्ट जी20 नेताओं को प्रस्तुत करना है। समिति की स्थापना राष्ट्रपति सिरिल रामाफोसा ने की और इसे नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री प्रोफेसर जोसेफ स्टिगलिट्ज ने अध्यक्षता दी। यह पहल तेजी से बढ़ती वैश्विक असमानताओं पर ध्यान केंद्रित करने के लिए है, जो आर्थिक स्थिरता, सामाजिक समरसता और राजनीतिक प्रगति के लिए खतरा हैं। हालिया विश्लेषण में दिखाया गया है कि 2015 से दुनिया के सबसे अमीर 1% ने 33.9 ट्रिलियन डॉलर की वृद्धि की है, जो वैश्विक गरीबी को 22 बार खत्म करने के लिए पर्याप्त है। ●

भारत नहीं झुकेगा अमेरिकी टैरिफ के आगे : पीयूष गोयल

नई दिल्ली में एक सम्मेलन में वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल ने कहा कि भारत अमेरिकी टैरिफ दबाव के आगे न तो झुकेगा और न ही कमजोर पड़ेगा। उन्होंने भरोसा जताया कि 2025-26 में भारत का निर्यात पिछले वर्ष से अधिक रहेगा। डोनाल्ड ट्रंप की वापसी के बाद अमेरिका ने भारत पर ऊँचे टैरिफ लगाए हैं, जिसका कारण रूस से भारत की तेल खरीद को बताया जा रहा है। सरकार ने इन्हें ₹अनुचित और अन्यायपूर्ण₹ करार दिया है। विशेषज्ञों के अनुसार 50% शुल्क वस्त्र, समुद्री उत्पाद और आभूषण जैसे क्षेत्रों को भारी नुकसान पहुँचा रहा है। कई अमेरिकी कंपनियों ने भारतीय ऑर्डर रद्द कर बांग्लादेश और वियतनाम की ओर रुख कर लिया है, जिससे रोजगार संकट गहरा सकता है। सरकार ने निर्यातकों को राहत देने के संकेत दिए हैं, जिनमें सब्सिडी और नए बाजारों की खोज शामिल है। ●

दहेज कानून: आज भी जलती ज़िंदगियाँ

1914 में स्नेहलता मुखोपाध्याय की आत्महत्या से शुरू हुई दहेज पर बहस आज भी खत्म नहीं हुई। 1961 में दहेज निषेध कानून और 1983 में आईपीसी की धारा 498ए लागू होने के बावजूद हालात सुधरे नहीं। 1970-80 के दशक में दिल्ली में हुई दहेज हत्याओं ने महिला आंदोलन को नई दिशा दी और 'ओम स्वाहा' जैसे नुक्कड़ नाटकों ने जागरूकता फैलाई। लेकिन 2025 में ग्रेटर नोएडा की निक्की भाटी की हत्या बताती है कि करीब सौ साल बाद भी भारतीय महिलाएं दहेज की बलि चढ़ रही हैं। क्या मौजूदा कानून नाकाफी हैं या फिर जागरुकता की कमी? ●

दुर्गा पूजा में घुली चुनावी सियासत

पश्चिम बंगाल में इस साल 45 हजार से अधिक दुर्गा पूजा पंडाल बन रहे हैं, जिनमें कई करोड़ों के बजट वाले हैं। चुनाव नजदीक आते ही यह त्योहार राजनीति से भी रंगने लगा है। मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने भाजपा-शासित राज्यों में बंगालियों के कथित उत्पीड़न के खिलाफ अभियान छेड़ा है, और इसी के असर से कोलकाता की कई समितियों ने 'बंगाल और बंगाली' थीम चुनी है। सरकार 2018 से पूजा पंडालों को अनुदान देती आ रही है, जो इस साल 1.10 लाख रुपये प्रति पंडाल हो गया है। ●

वोटर लिस्ट पर बवाल: बंगाल में 1 करोड़ फर्जी नाम!

एक स्टडी रिपोर्ट ने पश्चिम बंगाल की 2024 की वोटर लिस्ट में 1.04 करोड़ फर्जी नामों का खुलासा किया है, जो कुल मतदाताओं का करीब 13.7% है। रिपोर्ट के मुताबिक 2004 से 2024 तक वोटरों की संख्या 6.57 करोड़ होनी चाहिए थी, जबकि सूची में 7.61 करोड़ नाम दर्ज हैं। मृतक, नाबालिग और राज्य छोड़ चुके लोग भी मतदाता बने हुए हैं। बीजेपी ने आरोप लगाया है कि यह विपक्षी दलों की सुनियोजित साजिश है और फ्री एंड फेयर चुनाव असंभव है। अब चुनाव आयोग से सख्त कार्रवाई की मांग तेज हो गई है। ●

अखिलेश यादव का तंज: "बदलाव तय, बीजेपी इस्तेमाली पार्टी"

बिहार की वोटर अधिकार यात्रा में शामिल होकर अखिलेश यादव ने मीडिया से कहा कि राज्य का माहौल बदलाव की ओर है और इस बार इंडिया गठबंधन की सरकार बनेगी, तेजस्वी यादव मुख्यमंत्री बनेंगे। उन्होंने चुनाव आयोग पर सवाल उठाते हुए उसे "जुगाड़ आयोग" कहा। अखिलेश ने बीजेपी को "इस्तेमाली पार्टी" बताते हुए आरोप लगाया कि वह पहले इस्तेमाल करती है और फिर बर्बाद कर देती है। ●

इतिहास बनने की ओर नॉर्थ और साउथ ब्लॉक

सेंट्रल विस्टा प्रोजेक्ट के तहत केंद्र सरकार के मंत्रालय अब नए कर्तव्य भवनों में शिफ्ट हो रहे हैं। प्रधानमंत्री मोदी ने हाल ही में कर्तव्य भवन-3 का उद्घाटन किया, जिसमें गृह, विदेश और ग्रामीण विकास मंत्रालय के दफ्तर शिफ्ट हो चुके हैं। कुल दस कर्तव्य भवन बनाए जा रहे हैं, जिनमें सभी मंत्रालय एक जगह होंगे। 1950-70 के दशक में बने शास्त्री भवन, कृषि भवन, उद्योग भवन जैसे पुराने दफ्तर खाली होने लगेंगे। सबसे बड़ा बदलाव तब होगा जब रायसीना हिल्स पर स्थित नॉर्थ और साउथ ब्लॉक—इतिहास बन जाएंगे। ●

सुप्रीम कोर्ट के जजों की नियुक्ति पर उठे सवाल

सुप्रीम कोर्ट में पटना हाईकोर्ट के सीजे विपुल पंचोली और मुंबई हाईकोर्ट के सीजे आलोक अराधे की नियुक्ति से जजों की संख्या 34 हो गई है। लेकिन कॉलेजियम के भीतर इस पर असहमति सामने आई। जस्टिस बीवी नागरत्ना ने विरोध दर्ज करते हुए कहा कि जस्टिस पंचोली वरिष्ठता सूची में काफी नीचे हैं और सुप्रीम कोर्ट में पहले से गुजरात के दो जज मौजूद हैं, जिससे क्षेत्रीय संतुलन प्रभावित होगा। उनका असहमति नोट वेबसाइट पर प्रकाशित न होना विवाद को और बढ़ा गया। सीजेएआर ने कॉलेजियम की पारदर्शिता पर सवाल उठाते हुए जस्टिस नागरत्ना का नोट जारी करने की मांग की है। वरिष्ठ वकील इंदिरा जयसिंह ने भी पूछा कि वरिष्ठ महिला जजों को क्यों नजरअंदाज किया गया। 2021 के बाद से कोई नई महिला जज नियुक्त नहीं हुई है और वर्तमान में सुप्रीम कोर्ट में सिर्फ जस्टिस नागरत्ना ही महिला जज हैं। यह विवाद कॉलेजियम प्रणाली की विश्वसनीयता पर गंभीर प्रश्न खड़े करता है। ●

राहुल गांधी:नई राजनीतिक जमीन की तलाश

राहुल गांधी की 'वोटर अधिकार यात्रा' बिहार की राजनीति में कांग्रेस के पुनर्जीवन की कोशिश मानी जा रही है। यात्रा के जरिए वे युवाओं, किसानों और पिछड़े वर्गों को जोड़ने का प्रयास कर रहे हैं। राहुल चुनावी सुधार, आरक्षण और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों को केंद्र में रखकर बीजेपी और जेडीयू पर सीधा हमला बोल रहे हैं। विश्लेषकों का मानना है कि यह यात्रा कांग्रेस को बिहार में खोई जमीन वापस दिलाने की रणनीति है, हालांकि सफलता गठबंधन समीकरणों और स्थानीय नेतृत्व की मजबूती पर निर्भर करेगी। ●

मोहन भागवत: रिटायरमेंट पर सफाई और बीजेपी पर तंज

आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत ने 28 अगस्त को स्पष्ट किया कि उनका रिटायर होने का कोई इरादा नहीं है। आरएसएस अपने 100वें स्थापना वर्ष में प्रवेश कर रहा है और दिल्ली में आयोजित व्याख्यानमाला में भागवत ने कहा कि बीजेपी से मतभेद हो सकते हैं, पर मनभेद नहीं। हालांकि, उनके कुछ बयान पार्टी पर तंज जैसे लगे। हाल ही में 75 साल की उम्र पर पद छोड़ने की टिप्पणी से यह सवाल उठा था कि क्या वह प्रधानमंत्री मोदी की ओर इशारा कर रहे हैं, जो सितंबर में 75 वर्ष के हो जाएंगे। इस पर भागवत ने सफाई दी कि उन्होंने यह बात हास्यप्रिय मोरोपंत पिंगले का हवाला देकर कही थी। साथ ही, काशी-मथुरा विवादों पर उनकी टिप्पणी को भी राजनीतिक रूप से अहम माना जा रहा है। ●

श्रीराजेश, संपादक

एससीओ शिखर सम्मेलन

बदलता वैश्विक शक्ति संतुलन

चीन के साथ तनावों को संतुलित व अमेरिका के व्यापारिक दबाव का मुकाबला तथा आतंकवाद विरोधी विमर्श को दिशा देते हुए, त्यानजिन में हुए एससीओ शिखर सम्मेलन में भारत एक निर्णायक आवाज़ बनकर उभरा है। इस सम्मेलन ने बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में भारत की बढ़ती भूमिका को रेखांकित किया है।

शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) का त्यानजिन शिखर सम्मेलन महज़ एक सामान्य राजनयिक सभा से कहीं बढ़कर था; इसने तेजी से बदलती वैश्विक व्यवस्था में एक रणनीतिक खिलाड़ी के रूप में भारत की बढ़ती प्रतिष्ठा को रेखांकित किया। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के साथ हुई मुलाकात जून 2020 के गलवान संघर्ष के बाद तनावग्रस्त हुए एशिया के दो सबसे बड़े देशों के संबंधों को फिर से समायोजित करने के प्रयास का प्रतीक थी। चीन की उनकी सात वर्षों में पहली यात्रा का प्रतीकात्मक और वास्तविक, दोनों ही महत्व था।

मोदी का केंद्रीय संदेश स्पष्ट था, सीमा पर शांति और स्थिरता भारत-चीन संबंधों की आधारशिला बनी रहेगी। कैलाश मानसरोवर यात्रा की बहाली और सीधी उड़ानों की बहाली जैसी घोषणाएँ केवल दिखावा नहीं थीं, बल्कि विश्वास-निर्माण के उपाय थे। उनका यह बयान कि '2.8 अरब लोगों के हित हमारी साझेदारी से जुड़े हैं' द्विपक्षीय चिंताओं से परे एक दृष्टिकोण का संकेत था, जो भारत-चीन सहयोग को वैश्विक स्थिरता के लिए आवश्यक बताता है।

यह शिखर सम्मेलन वाशिंगटन के बढ़ते आर्थिक दबाव की पृष्ठभूमि में हुआ। अमेरिका ने हाल ही में भारतीय निर्यातों पर 50% तक टैरिफ लगाया था, जिससे नई दिल्ली पर नए दबाव बन रहे थे। इस संदर्भ में, बीजिंग का खुला समर्थन एक प्रभावशाली राजनयिक सफलता थी। चीनी राजदूत का यह आश्वासन कि 'चीन मजबूती से भारत के साथ खड़ा रहेगा और अमेरिका की दबाव की राजनीति को अस्वीकार करेगा' एक सूक्ष्म लेकिन शक्तिशाली बदलाव का प्रतीक था। भारत के लिए, इसने न केवल रणनीतिक दायरे को बढ़ाया, बल्कि अमेरिकी दबावों का सामना करने में लचीलेपन की एक छवि भी पेश की।

इसकी बहुत सी ज़मीन राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल और चीनी विदेश मंत्री वांग यी ने पहले ही तैयार कर ली थी, जिन्होंने सीमा मुद्दे पर विशेष प्रतिनिधियों की वार्ता के 24वें दौर का नेतृत्व किया था। सीमा प्रबंधन, सीमा-पार व्यापार की बहाली और आगामी ब्रिक्स अध्यक्षताओं (2026–27) के दौरान आपसी समर्थन पर हुए समझौते इसी आधारभूत कार्य के परिणाम थे। उन्होंने दर्शाया कि, हालाँकि अविश्वास अभी भी बना हुआ है, सहयोग धीरे-धीरे जड़ें जमा रहा है।

त्यानजिन में भारतीय कूटनीति की एक निर्णायक विशेषता आतंकवाद पर उसका अडिग रुख था। जम्मू और कश्मीर के पहलगाम में हुए हालिया हमले का हवाला देते हुए, मोदी ने घोषणा की कि 'आतंकवाद पर दोहरा मापदंड अस्वीकार्य है।' यह संदेश, मुख्य रूप से पाकिस्तान पर लक्षित था, जो पूरे मंच पर गूंजा। एससीओ की संयुक्त घोषणा ने इसी भाषा को दोहराया, बिना किसी शर्त के आतंकवाद के सभी रूपों की निंदा की—यह भारत के लिए एक उल्लेखनीय जीत थी, जो लंबे समय से अपने इस रुख की वैश्विक मान्यता चाहता रहा है।

इसी तरह महत्वपूर्ण मोदी का कनेक्टिविटी पर ज़ोर देना था। जहाँ शी ने 'मतभेदों को एक तरफ रखते हुए समान आधार खोजने' का आह्वान किया, वहीं

मोदी ने दृढ़ता से रेखांकित किया कि कनेक्टिविटी पहल को राष्ट्रीय संप्रभुता का सम्मान करना चाहिए—यह चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे (सीपीईसी) की एक अप्रत्यक्ष आलोचना थी, जो पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से होकर गुजरता है। इसके बजाय, भारत ने चाबहार बंदरगाह और अंतर्राष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारे जैसी पहलों के माध्यम से समावेशी कनेक्टिविटी के अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया, जो विश्वास, समानता और वास्तविक साझेदारी को प्राथमिकता देती है।

शिखर सम्मेलन ने रूस-भारत-चीन (आरआईसी) त्रिपक्षीय संवाद पर भी चर्चा फिर से शुरू की। एक समय पश्चिमी प्रभुत्व के खिलाफ एक संतुलन तंत्र के रूप में देखे जाने वाले आरआईसी, एक बहुध्रुवीय व्यवस्था के एक महत्वपूर्ण स्तंभ के रूप में उभर सकता है। इसे ध्यान में रखते हुए **कल्ट करंट** में अपने आवरण कथा को इसी पर फोकस किया है। आज के माहौल में, जब अमेरिका संरक्षणवाद की ओर बढ़ रहा है और यूरोप एक द्वितीयक भूमिका में सिमट गया है, आरआईसी का पुनरुद्धार भारत के विश्व मामलों में अधिक स्वायत्तता की खोज के लिए रणनीतिक महत्व रखता है।

नई दिल्ली के लिए, त्यानजिन शिखर सम्मेलन बीजिंग के साथ संबंध सुधारने से कहीं अधिक था। इसने आतंकवाद, आर्थिक लचीलेपन और कनेक्टिविटी पर आख्यानों को आकार देने की भारत की क्षमता को प्रदर्शित किया, जबकि प्रमुख शक्तियों के साथ समान शर्तों पर जुड़ा रहा। इसके परिणाम—सीमा स्थिरता, अमेरिकी टैरिफ के खिलाफ चीन का समर्थन, भारत के आतंकवाद विरोधी रुख का एक अंतरराष्ट्रीय समर्थन, और एक वैकल्पिक कनेक्टिविटी मॉडल का निर्धारण—सामूहिक रूप से भारत को मंच पर एक असाधारण राजनयिक शक्ति के रूप में उजागर करते हैं।

चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं। भारत-चीन संबंधों में संरचनात्मक दरारें गहरी हैं, और विश्वास रातोंरात फिर से नहीं बनाया जा सकता। फिर भी त्यानजिन ने दिखाया कि नई दिल्ली व्यावहारिक रूप से जुड़ने को तैयार है, टकराव को संवाद के साथ संतुलित कर रही है, और सहयोग की संभावना तलाशते हुए संप्रभुता की रक्षा कर रही है।

अंततः, यह शिखर सम्मेलन भारत के राजनयिक आत्मविश्वास को दर्शाता है। अब इसे एक हाशिए के खिलाड़ी के रूप में नहीं देखा जाता, बल्कि यह एशिया और उससे आगे जुड़ाव के नियमों को आकार देने में सक्षम देश के रूप में उभरा है। अब असली चुनौती इस गति को बनाए रखना और राजनयिक सफलताओं को स्थायी नीतिगत परिणामों में बदलना है। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि तियानजिन ने भारतीय कूटनीति के लिए एक नया क्षितिज खोला है—एक ऐसा क्षितिज जहाँ भारत केवल एक प्रतिभागी नहीं, बल्कि उभरती विश्व व्यवस्था का एक वास्तुकार है।

srirajesh.journalist @srirajesh editor@cultcurrent.com

गगनयान से आदित्य तक

इसरो गढ़ रहा नई पहचान

जलज श्रीवास्तव

गगनयान की सफल उड़ान से लेकर आदित्य-एल1 के वैज्ञानिक चमत्कार तक, अगस्त 2025 इसरो के लिए स्वर्णिम अध्याय बन गया। भारत अब न केवल अंतरिक्ष प्रतिस्पर्धा का हिस्सा है, बल्कि वैश्विक मंच पर नई परिभाषा गढ़ती उभरती शक्ति है।

अगस्त 2025 भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के लिए एक ऐतिहासिक और परिवर्तनकारी माह के रूप में दर्ज हुआ। इस अवधि में हुई प्रमुख तकनीकी उपलब्धियों—मानव-रेटेड अंतरिक्ष यान का सफल परीक्षण, एक अभूतपूर्व संयुक्त उपग्रह मिशन का क्रियान्वयन, एक सुपर-हैवी-लिफ्ट लॉन्च वाहन की घोषणा, और सौर भौतिकी में महत्वपूर्ण योगदान—ने भारत की अंतरिक्ष क्षमताओं को एक नई कक्षा में स्थापित कर दिया है। ये उपलब्धियाँ भारत को केवल एक उभरती हुई अंतरिक्ष शक्ति के रूप में नहीं, बल्कि वैश्विक अंतरिक्ष व्यवस्था में एक प्रमुख, स्वायत्त और प्रभावशाली स्तंभ के रूप में स्थापित करती हैं। इसरो की इस यात्रा ने अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के विकासवादी प्रक्षेपवक्र के समानांतर, भारत के 'अनुसरणकर्ता' से 'समानांतर शक्ति' बनने के उपलब्धियों को रेखांकित करता है।

अंतरिक्ष प्रभुत्व का बदलता समीकरण

21वीं सदी में अंतरिक्ष अन्वेषण केवल वैज्ञानिक जिज्ञासा का विषय नहीं, बल्कि भू-राजनीतिक प्रभुत्व, तकनीकी श्रेष्ठता और आर्थिक अवसरों का एक निर्णायक क्षेत्र बन गया है। शीत युद्ध काल के द्विध्रुवीय अंतरिक्ष प्रतिस्पर्धा (अमेरिका बनाम सोवियत संघ) से आगे बढ़कर, आज का परिदृश्य बहुध्रुवीय है, जिसमें चीन, यूरोप और अब भारत जैसे प्रमुख अभिकर्ता शामिल हैं। इस

प्रतिस्पर्धी माहौल में, अगस्त 2025 इसरो के लिए एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ, जब संगठन ने कई महत्वपूर्ण क्षेत्रों में अपनी क्षमता का प्रदर्शन किया, जिससे वैश्विक मंच पर उसकी स्थिति मौलिक रूप से बदल गई। ये उपलब्धियों दर्शाती है कि इसरो अब नासा जैसे स्थापित संस्थानों के साथ बराबरी पर खड़ा होकर वैश्विक अंतरिक्ष के भविष्य को आकार देने की क्षमता रखता है।

सामरिक स्वायत्तता की प्राप्ति

किसी भी राष्ट्र के लिए अंतरिक्ष महाशक्ति का दर्जा प्राप्त करने की दो प्रमुख कसौटियाँ हैं: मानव को अंतरिक्ष में भेजने की संप्रभु क्षमता और भारी पेलोड को इच्छित कक्षा में स्थापित करने की आत्मनिर्भरता। अगस्त 2025 में इसरो ने इन दोनों क्षेत्रों में निर्णायक प्रगति की।

24 अगस्त 2025 को संपन्न हुआ आईएडीटी-01 परीक्षण, गगनयान मिशन की तकनीकी परिपक्वता का प्रतीक है। इस परीक्षण में क्रू मॉड्यूल के वायुमंडलीय पुनः प्रवेश और पैराशूट-आधारित अवतरण प्रणाली की सटीकता का सफलतापूर्वक मूल्यांकन किया गया। यह प्रक्रिया मानव अंतरिक्ष उड़ान का सबसे जटिल और जोखिम भरा चरण है, जहाँ त्रुटि की कोई गुंजाइश नहीं होती। नासा ने अपने अपोलो और स्पेस शटल कार्यक्रमों के लिए इस तकनीक को सिद्ध करने में वर्षों लगाए थे। इसरो द्वारा इस महत्वपूर्ण पड़ाव को पार करना यह प्रमाणित करता है कि भारत ने अपने अंतरिक्ष यात्रियों की सुरक्षित वापसी सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक इंजीनियरिंग और प्रणाली एकीकरण में महारत हासिल कर ली है। यह उपलब्धि भारत को अमेरिका, रूस और चीन के उस विशिष्ट क्लब में शामिल करती है, जिनके पास स्वदेशी मानव अंतरिक्ष उड़ान की क्षमता है।

इसी महीने, इसरो प्रमुख द्वारा 120 मीटर ऊँचे और 75 टन पेलोड को निम्न पृथ्वी कक्षा (एलईओ) में ले जाने में सक्षम एक नए रॉकेट की घोषणा, भारत की दीर्घकालिक अंतरिक्ष रणनीति को उजागर करती है। यह क्षमता नासा के 'स्पेस लॉन्च सिस्टम (एसएलएस)' और स्पेसएक्स के 'स्टारशिप' के समकक्ष है। ऐसा वाहन न केवल भारत को वाणिज्यिक उपग्रह प्रक्षेपण बाजार के सबसे आकर्षक खंड (भारी संचार और सैन्य उपग्रह) में एक प्रमुख खिलाड़ी बना देगा, बल्कि यह चंद्र आधार (लूनर बेस), मंगल मिशन और भविष्य के अंतरिक्ष स्टेशन जैसे अंतरग्रहीय अभियानों के लिए भी मार्ग प्रशस्त करेगा। यह घोषणा इसरो की सोच में एक रणनीतिक बदलाव का संकेत है—जो अब केवल आवश्यकता-आधारित अनुप्रयोगों तक सीमित नहीं, बल्कि भविष्य के अन्वेषण-संचालित अवसरों पर केंद्रित है।

वैश्विक सहयोग का नया प्रतिमान

निसार (नासा-इसरो सिंथेटिक एपरेटर राडार) उपग्रह, जो जुलाई 2025 में प्रक्षेपित हुआ, ने अगस्त में अपने 12-मीटर रिफ्लेक्टर एंटीना को सफलतापूर्वक तैनात कर संचालन शुरू किया। यह मिशन इसरो और नासा के बीच सहयोग के बदलते स्वरूप का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। पूर्व में, ऐसे सहयोगों में इसरो अक्सर एक कनिष्ठ भागीदार की भूमिका में होता था, जो डेटा या छोटे घटकों का योगदान करता था। निसार में, इसरो ने एस-बैंड एसएआर पेलोड, अंतरिक्ष यान बस और प्रक्षेपण वाहन प्रदान किया, जो मिशन की सफलता के लिए नासा के एल-बैंड पेलोड जितना ही महत्वपूर्ण है।

निसार की सफलता यह दर्शाती है कि भारत अब केवल प्रौद्योगिकी का प्राप्तकर्ता नहीं, बल्कि एक समान भागीदार है जो अत्याधुनिक प्रणालियों का सह-विकास और सह-संचालन कर सकता है। यह मिशन जलवायु परिवर्तन, आपदा प्रबंधन और पारिस्थितिक निगरानी जैसे वैश्विक मुद्दों पर डेटा प्रदान करेगा, जिससे भारत की भूमिका एक जिम्मेदार वैश्विक वैज्ञानिक हितधारक के रूप में और मजबूत होगी।

विज्ञान और समाज का संगम

अंतरिक्ष कार्यक्रमों की स्थायी सफलता केवल तकनीकी उपलब्धियों पर नहीं, बल्कि सार्वजनिक समर्थन और अगली पीढ़ी को प्रेरित करने की क्षमता पर भी निर्भर करती है।

राष्ट्रीय चेतना का निर्माण

23 अगस्त को मनाया गया राष्ट्रीय अंतरिक्ष दिवस, जिसकी थीम 'आर्यभट्ट से गगनयानः प्राचीन प्रज्ञान से अनंत संभावनाएं' थी, इसरो के सार्वजनिक जुड़ाव के परिपक्व दृष्टिकोण को दर्शाती है। नासा की तरह, जिसने दशकों से अपने अभियानों को अमेरिकी गौरव और प्रेरणा का स्रोत बनाया है, इसरो भी अब अंतरिक्ष को राष्ट्रीय चेतना से जोड़ने का सचेत प्रयास कर रहा है। एनसीईआरटी के माध्यम से शैक्षणिक मॉड्यूल जारी करना और भविष्य के अंतरिक्ष यात्रियों को एक राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करना, यह सुनिश्चित करता है कि अंतरिक्ष कार्यक्रम केवल एक सरकारी पहल न रहकर एक जन आंदोलन बने।

आदित्य-एल1

अगस्त 2025 में आदित्य-एल1 मिशन द्वारा अपने संचालन का एक वर्ष पूरा करना, भारत को सौर भौतिकी के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण डेटा उत्पादक के रूप में स्थापित करता है। इसके एसयूआईटी पेलोड द्वारा प्रदान किए गए अद्वितीय डेटा ने सूर्य के कोरोना और सौर ज्वालाओं पर वैश्विक समझ को बढ़ाया है। पहले जहाँ दुनिया काफी हद तक नासा के सोलर डायनेमिक्स ऑब्जर्वेटरी (एसडीओ) जैसे मिशनों पर निर्भर थी, वहीं अब आदित्य-एल1 एक पूरक और स्वतंत्र डेटा स्रोत प्रदान कर रहा है। यह इसरो के 'डेटा आयातक' से 'डेटा निर्यातक' बनने की स्थिति का द्योतक है।

अगस्त 2025 में इसरो की उपलब्धियों का सामूहिक विश्लेषण एक स्पष्ट निष्कर्ष प्रस्तुत करता है: भारत अब अंतरिक्ष क्षेत्र में केवल एक प्रतिस्पर्धी नहीं, बल्कि एक समानांतर शक्ति के रूप में उभरा है।

गेम ऑन, पेरेंट्स ऑफ़ ?

कुमार संदीप

लोकसभा ने ऑनलाइन गेमिंग विधेयक, 2025 पास कर बच्चों की डिजिटल सुरक्षा की जिम्मेदारी अभिभावकों पर डाल दी है। दांव, लत और इन-ऐप खर्च पर रोक लगाने का वादा तो बड़ा है, लेकिन असली चुनौती है—अनभिज्ञ माता-पिता को डिजिटल रेफरी बनाना।

लोकसभा ने पिछले सप्ताह ऑनलाइन गेमिंग विधेयक, 2025 पारित किया। इसके वादे सादे और सशक्त हैं—ऑनलाइन गेमिंग को सुरक्षित बनाना, ख़ासकर बच्चों के लिए। इसमें स्पष्ट तौर पर दांव लगाने पर पाबंदी है, बच्चों के लिए खेलने का समय सीमित करने का प्रावधान है, और गेमिंग कंपनियों को जवाबदेह ठहराया गया है। सबसे अहम बातः अब नाबालिग बच्चे तभी ऑनलाइन गेम खेल सकेंगे जब उनके माता-पिता अनुमति देंगे।

सुनने में यह बेहद सरल लगता है। लेकिन असलियत इतनी सरल नहीं।

यह पहली बार नहीं है जब भारतीय क़ानून ने बच्चों की डिजिटल सुरक्षा के लिए माता-पिता को अंतिम ताले के रूप में देखा है। डिजिटल डेटा संरक्षण अधिनियम, 2023 ने भी यही किया था—बच्चों के डाटा की प्रोसेसिंग से पहले अभिभावक की सहमति ज़रूरी। उस समय भी आलोचकों ने कहा था कि हम माता-पिता को 'सर्वज्ञ संरक्षक' मानकर ऐसे जहाज़ का पायलट बना रहे हैं जिसे उड़ाना उन्होंने कभी सीखा ही नहीं।

दो साल बाद, वही कहानी फिर दोहराई जा रही है। बस इस बार जहाज़ और भी जटिल हो गया है। चमकती रोशनी, इनामों के लुभावने चक्र, और ऐसे वर्चुअल संसार जहाँ बच्चे सहजता से घूमते हैं, जबकि उनके माता-पिता पर्यटक की तरह लड़खड़ाते हैं।

क़ानून की भाषा में यह विधेयक मज़बूत दिखता है। इसमें 'गेमिंग के नाम पर जुए' को पहचानकर दंडित किया गया है, कंपनियों को रजिस्ट्रेशन और अनुपालन का आदेश है, और बच्चों के लिए समय व ख़र्च की सीमा तय की गई है।

लेकिन वास्तविकता लीविंग रूम में तय होती है, अदालतों में नहीं।

अगर कोई माता-पिता बिना समझे 'मैं सहमत हूँ' पर क्लिक कर दें, तो वे सुरक्षा का कवच नहीं बल्कि सिर्फ़ रबर स्टैम्प बन जाते हैं। अगर कोई कहे, 'मुझे ये ऐप्स समझ नहीं आते', तो इसका मतलब है उन्होंने अपने बच्चे को जुए के अड्डे में अकेला छोड़ दिया और उम्मीद कर ली कि सब ठीक रहेगा।

क़ानून की महत्वाकांक्षा और परिवार की वास्तविकता के बीच का अंतराल बेहद चौड़ा है। बच्चे इस डिजिटल दुनिया में 'नेटिव्स' की तरह चलते हैं, और अभिभावक 'यात्री' की तरह भटकते हैं।

नियंत्रण का भ्रम

यह दृश्य नया नहीं है। जब स्मार्टफ़ोन भारतीय घरों में पहुँचे, बच्चे इंस्टाग्राम ट्रेंड और डिस्कॉर्ड सर्वर तलाश रहे थे, जबकि माता-पिता अब भी परिवार के व्हाट्सऐप ग्रुप को म्यूट करना सीख रहे थे।

नतीजा यह हुआ कि बच्चों की डिजिटल गति बहुत तेज़ थी, जबकि घरों के नियम वही पुराने clichs रहेः 'बस ज़्यादा फोन मत चलाओ' या 'पढ़ाई पर ध्यान दो'।

ऑनलाइन गेमिंग विधेयक इस अंतर को 'अनिवार्य सहमति' से भरने की कोशिश करता है। लेकिन समझ के बिना सहमति का कोई अर्थ नहीं। अगर अभिभावक को यह ही न पता हो कि 'लूट बॉक्स' क्या है या इन-गेम ख़रीद कैसे काम करती है, तो उनकी अनुमति अंधेरे में सिर हिलाने जैसी है।

क़ानून ने माता-पिता को गेमिंग का जॉयस्टिक थमा दिया है। पर सच्चाई यह है कि अधिकांश को यह नहीं पता कि बटन कहाँ हैं।

इन-ऐप ख़र्च का जाल

पिछले साल दिल्ली की एक 14 वर्षीय छात्रा ने गुप्त रूप से अपने पिता के क्रेडिट कार्ड से 2.3 लाख खर्च कर डाले। परिवार को तब पता चला जब बैंक से अलर्ट आया। यह राशि मुख्यतः गेमिंग ऐप्स पर 'लूट बॉक्स' और इन-ऐप ख़रीद पर गई थी।

माता-पिता ने कभी यह नहीं समझा था कि 'फ्री टू प्ले' गेम वास्तव में मुफ्त नहीं होते। उनके लिए यह बस मोबाइल पर खेलने वाला एक खेल था। लेकिन बच्चे के लिए यह वर्चुअल कैसिनो था।

यह घटना दिखाती है कि सहमति और निगरानी के बिना सिर्फ़ 'अनुमति क्लिक' कोई सुरक्षा नहीं देती।

पालन-पोषण को चाहिए नया अवतार

आसान समाधान है—माता-पिता को दोष देना। कहना कि वे लापरवाह हैं या डिजिटल रूप से निरक्षर। लेकिन वास्तविकता कहीं गहरी है। भारत ने कभी माता-पिता को डिजिटल युग के लिए तैयार करने में निवेश ही नहीं किया।

आज खेल का मैदान पार्कों से ऐप्स पर, गली-कूचों से गेम सर्वरों पर खिसक गया है। अजनबी अब दरवाज़ा खटखटाने नहीं आते, वे फ़्रेंड रिक्वेस्ट भेजते हैं। पॉकेट मनी अब सिक्कों और नोटों में नहीं मिलती, बल्कि गेमिंग ऐप्स में ख़र्च होकर गायब हो जाती है।

नया पालन-पोषण यानी रिबूटेड पेरेंटिंग का अर्थ स्क्रीन बैन करना नहीं है। इसका अर्थ है माता-पिता को जागरूकता, औज़ार और आत्मविश्वास देना ताकि वे बच्चों को इस नए परिदृश्य में समझदारी से दिशा दे सकें।

स्कूल: पहली पंक्ति की चौकी

सबसे स्वाभाविक प्रवेश बिंदु है—स्कूल। आज अभिभावक-शिक्षक बैठकों का लगभग पूरा समय अंक, उपस्थिति और अनुशासन पर जाता है। वही बैठक अगर 20 मिनट डिजिटल सुरक्षा पर हो—ऑनलाइन गेमिंग के नियम, इन-ऐप ख़र्च की चालाकियाँ, साइबरबुलिंग के खतरे—तो फर्क आ सकता है।

नया डिजिटल सामाजिक अनुबंध

भारत को भी यही करना होगा। राज्य सिर्फ़ कानून न बनाए, बल्कि सरल भाषा में गाइडबुक्स और प्रशिक्षण भी दे। माता-पिता सिर्फ़ 'अनुमति क्लिक' करने वाले न बनें, बल्कि वास्तविक रेफरी बनें। और कंपनियाँ सिर्फ़ नफ़े की चिंता न करें, बल्कि सुरक्षा को अपनी जिम्मेदारी मानें।

दांव बहुत ऊँचे हैं

पालन-पोषण का अर्थ हमेशा रहा है बच्चों को उस दुनिया के लिए तैयार करना जिसमें वे रहते हैं। अब वह दुनिया डिजिटल है।

ऑनलाइन गेमिंग विधेयक माता-पिता को रेफरी बनाता है। लेकिन अगर उन्हें नियम ही न पता हों, तो सीटी बजाना व्यर्थ है।

इसलिए भारत को तुरंत निवेश करना होगा—डिजिटल साक्षरता, स्कूल-स्तरीय प्रशिक्षण और सामुदायिक कार्यशालाओं में। तभी यह कानून सिर्फ़ किताबों में नहीं, बल्कि असल ज़िंदगी में बच्चों को सुरक्षित बनाएगा।

अकाल असली गुनहगार कौन?

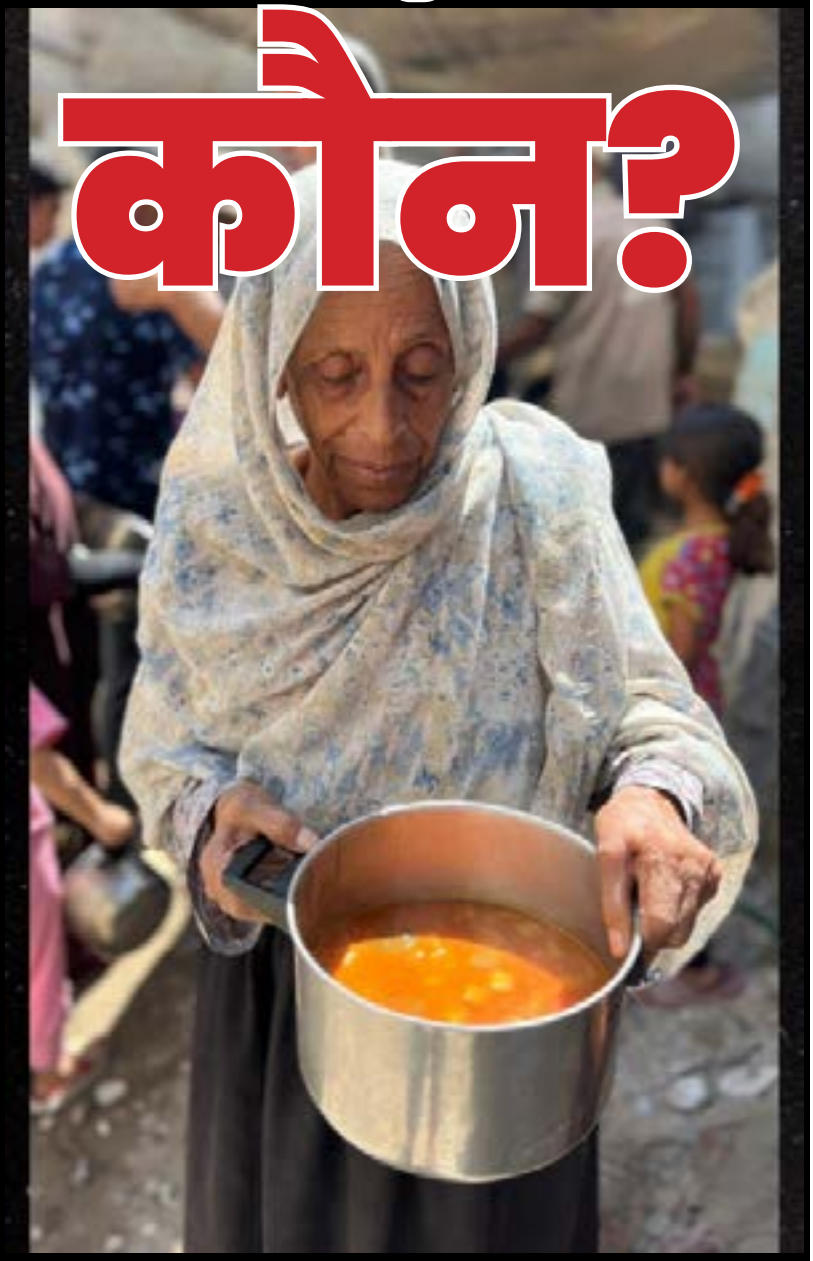

मारियल फेरागामो

गाजा सिटी में संयुक्त राष्ट्र समर्थित संस्था ने 'पूरी तरह से मानव निर्मित' अकाल घोषित किया है, जिससे लाखों लोग भुखमरी का सामना कर रहे हैं। इजरायल इसे 'सरासर झूठ' बताते हुए हमास पर सहायता लूटने का आरोप लगाता है। यह लेख सहायता वितरण में जटिल बाधाओं, भुखमरी से हो रही मौतों और गाजा संकट के वास्तविक गुनहगार पर सवाल खड़े करता है।

संयुक्त राष्ट्र समर्थित वैश्विक भूख निगरानी संस्था ने 20 अगस्त को आधिकारिक तौर पर घोषणा की कि गाजा सिटी में 'पूरी तरह से मानव निर्मित' अकाल पड़ा है, जो युद्ध शुरू होने से पहले इस एन्क्लेव का सबसे बड़ा जनसंख्या केंद्र था। यह घोषणा लगभग दो मिलियन लोगों के इस एन्क्लेव में हफ्तों तक सीमित सहायता वितरण के बाद हुई है।

एकीकृत खाद्य सुरक्षा चरण वर्गीकरण (आईपीसी) प्रणाली के अनुसार, जिसने 20 अगस्त को 'सबसे खराब स्थिति' वाले अकाल की पुष्टि की, पांच लाख लोग - गाजा में फिलिस्तीनियों का कम से कम एक चौथाई - वर्तमान में भुखमरी की स्थिति में हैं। आईपीसीने आगे कहा कि सितंबर के अंत तक यह आंकड़ा 640,000 तक बढ़ सकता है।

संयुक्त राष्ट्र और स्थानीय स्वास्थ्य अधिकारियों ने

इस क्षेत्र में सैकड़ों मौतों का कारण या तो कुपोषण या खाद्य सहायता वितरण स्थलों पर हुई हिंसा को बताया है। स्थानीय लोगों और मानवीय अधिकारियों ने कहा है कि अक्टूबर 2023 में संघर्ष की शुरुआत के बाद से यह सबसे खराब स्थिति है जिसका उन्होंने अनुभव किया है।

इज़रायल के प्रधान मंत्री बेंजामिन नेतन्याहू के कार्यालय ने आईपीसी की अकाल रिपोर्ट को 'सरासर झूठ' बताया है। उनका तर्क है कि इज़रायल ने युद्ध शुरू होने के बाद से दो मिलियन टन सहायता पहुंचाई है और हमास ने अपनी 'युद्ध मशीन को वित्त पोषित करने' के लिए कई वितरण शिपमेंट लूट लिए हैं।

सहायता वितरण पर इज़रायल द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों को समाप्त करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय अपीलें बढ़ रही हैं, जिन्हें कुछ विशेषज्ञ अंतर्राष्ट्रीय मानवीय कानून का उल्लंघन मानते हैं। इज़रायली, फिलिस्तीनी और अंतर्राष्ट्रीय खिलाड़ी - जिसमें संयुक्त राज्य अमेरिका और संयुक्त राष्ट्र एजेंसियां शामिल हैं - सभी विभिन्न बिंदुओं पर सहायता वितरण प्रणाली में प्रमुख खिलाड़ी रहे हैं, हालांकि वर्तमान सहायता अभियान अब इज़रायल की कड़ी निगरानी में एक अमेरिकी समूह तक सीमित है। इज़रायली अधिकारियों ने कहा है कि वे गाजा में सहायता पहुंचाने के वैकल्पिक साधन चाहते हैं, क्योंकि वे लगातार आरोप लगाते रहे हैं कि हमास फिलिस्तीनी आबादी की कीमत पर सहायता जब्त कर रहा है।

बढ़ती अंतर्राष्ट्रीय आलोचना के जवाब में, इज़रायली सेना ने 27 जुलाई को घोषणा की थी कि वह गाजा के कुछ क्षेत्रों में अभियानों में 'रणनीतिक विराम' लागू कर रही है और संयुक्त राष्ट्र और सहायता एजेंसी के काफिलों को एन्क्लेव में प्रवेश करने में सक्षम बनाने के लिए मानवीय गलियारे खोल रही है। लेकिन अगस्त के अंत में, इज़रायली सेना ने गाजा सिटी में एक विस्तारित आक्रमण जारी रखा, हालांकि इज़रायल से हिंसा को रोकने का आह्वान किया गया था।

गाजा में क्या हो रहा है?

विशेषज्ञों का कहना है कि इज़रायल के मीडिया प्रतिबंधों के कारण गलत सूचना और बाहरी रिपोर्टिंग की कमी ने स्थिति की स्पष्ट तस्वीर विकसित करना मुश्किल बना दिया है। इज़रायली अधिकारियों ने विवादास्पद, लाभ के लिए संचालित, अमेरिकी और इज़रायल समर्थित गाजा मानवीय फाउंडेशन (जीएचएफ-) का बचाव किया है।

संयुक्त राष्ट्र के अधिकारियों ने कहा है कि जमीन पर मौजूद कर्मचारी और अन्य सहायताकर्मी, डॉक्टर और पत्रकार अब सीमित भोजन पहुंच के कारण भूख और थकावट से बेहोश हो रहे हैं - यह सब तब हो रहा है जब खाद्य कमी की घटनाओं से मरने वालों की संख्या लगातार बढ़ रही है।

स्थानीय समूहों और अंतर्राष्ट्रीय सहायता संगठनों ने गाजा में आबादी के लिए बढ़ते जोखिम को भी उजागर किया है। फिलिस्तीनी स्वास्थ्य मंत्रालय के अनुसार, 22 अगस्त तक, हाल के हफ्तों में कम से कम 273 लोग भुखमरी से मर चुके हैं। फिलिस्तीनी शरणार्थियों के लिए संयुक्त राष्ट्र एजेंसी, यूएनआरडब्ल्यूए ने कहा है कि गाजा में दस लाख बच्चे - आधी आबादी - भुखमरी के जोखिम में हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट है कि मार्च से अब तक पचास से अधिक बच्चों की कुपोषण से मौत हो चुकी है। बिगड़ती भूख की स्थिति ने और भी अधिक लोगों को पहले से ही अत्यधिक बोझ वाले अस्पतालों में भेज दिया है, जिन्हें ने 'टूटने के कगार पर' बताया है - संघर्ष के कारण 94 प्रतिशत क्षतिग्रस्त या पूरी तरह से नष्ट हो चुके हैं। संयुक्त राष्ट्र ने बताया कि हाल के हफ्तों में एक हजार से अधिक फिलिस्तीनी भोजन प्राप्त करने की कोशिश करते हुए मारे गए हैं। इसने मंगलवार को चेतावनी दी कि गाजा की 'लोगों को जीवित रखने वाली आखिरी जीवन रेखाएं ध्वस्त हो रही हैं।'

अंतर्राष्ट्रीय कानून पर सीएफआर विशेषज्ञ डेविड जे. शेफर ने कहा कि यह स्थिति इज़रायल को युद्ध अपराधों के आरोपों के जोखिम में डाल सकती है, खासकर अगर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय यह पाता है कि वह सहायता में बाधा डाल रहा है या इसे चाहने वाले नागरिकों को नुकसान पहुंचा रहा है। उन्होंने कहा, 'अगर सहायता में बाधा डालने की कोई भी रणनीति सामने आती है जिससे नागरिकों में भुखमरी फैलती है, जिसमें जानबूझकर राहत आपूर्ति में बाधा डालना शामिल है, तो इससे युद्ध अपराधों के आरोप लग सकते हैं।'

इज़रायली अधिकारियों ने बार-बार इस आरोप को खारिज किया है कि उनकी सैन्य कार्रवाई सशस्त्र संघर्ष के कानूनों का उल्लंघन करती है, उनका कहना है कि आरोप हमास-संचालित स्वास्थ्य सुविधाओं द्वारा प्रदान किए गए दोषपूर्ण आंकड़ों पर आधारित हैं।

खाद्य पदार्थों की कमी ने वितरण स्थलों को तेजी से खतरनाक बना दिया है। फिलिस्तीनी रेड क्रिसेंट सोसाइटी ने कहा कि इज़रायली सेना ने 'नागरिकों को निशाना बनाया है,' उन पर उत्तरी गाजा में एक वितरण स्थल पर सहायता तक पहुंचने की कोशिश कर रहे फिलिस्तीनियों पर गोली चलाने का आरोप लगाया। इज़रायल ने इस आरोप से इनकार किया। इज़रायल रक्षा बलों ने कहा कि उन्होंने 'तत्काल खतरे को दूर करने के लिए चेतावनी शॉट चलाए थे' और रिपोर्ट की गई हताहतों की संख्या पर विवाद किया।

20 जुलाई को, लगभग सौ नागरिक घातक रूप से गोली मार दिए गए थे जब वे रोटी के लिए आटा बांट रहे संयुक्त राष्ट्र के काफिलों से खाद्य सहायता प्राप्त करने की कोशिश कर रहे थे। उससे एक सप्ताह पहले, जीएचएफ सहायता स्थल पर हजारों लोगों की भगदड़ मच गई थी, जिसमें कम से कम बीस लोग मारे गए थे।

गाजा में सहायता समूहों ने कैसे प्रतिक्रिया दी है और वे कैसे प्रभावित हुए हैं?

गाजा में काम कर रहे सौ से अधिक सहायता समूहों ने चेतावनी दी है कि इज़रायल के सहायता प्रतिबंध भूख संकट का कारण बन रहे हैं, डॉक्टर्स विदाउट बॉर्डर्स ने कहा है कि 'मानवीय संगठन अपने ही सहयोगियों और भागीदारों को अपनी आंखों के सामने बर्बाद होते देख रहे हैं।'

केयर इंटरनेशनल, एक वैश्विक गैर-लाभकारी संस्था जो सौ से अधिक देशों में भूख और गरीबी पर काम कर रही है, 1948 से गाजा और वेस्ट बैंक में काम कर रही है और हाल के गाजा संकट का जवाब देने वाली पहली संगठनों में से एक थी।

इसके मुख्य मानवीय अधिकारी दीपमाला महला ने सीएफआर को बताया कि वे गाजा में अब जो देख रहे हैं, वह 'हर मिनट बिगड़ रहा है।' उन्होंने शहरों को खंडहर में बदलते हुए, बच्चों को खाली बर्तन पकड़े हुए, और लोगों को भुखमरी के कारण दिन-ब-दिन 'सिकुड़ते' हुए बताया। जुलाई के अंत तक, गाजा में उनकी टीम को 140 दिनों से कोई

सहायता शिपमेंट प्राप्त नहीं हुआ था।

वर्ल्ड फ़ूड प्रोग्राम, जिसके कर्मचारी गाजा में भी हैं, ने स्थिति के बारे में चिंता जताई है, यह कहते हुए कि 'लगभग हर तीन में से एक व्यक्ति कई दिनों से खाना नहीं खा रहा है।' गाजा में काम करने वाले पत्रकार भी भोजन की कमी से प्रभावित हैं। फ्रांसीसी समाचार एजेंसी एएफपी ने बताया है कि गाजा में उसके कर्मचारी भूखे मर रहे हैं।

आउटलेट के संघ ने कहा, 'एएफपी की स्थापना 1944 में होने के बाद से, हमने संघर्षों में पत्रकार खोए हैं, कुछ घायल हुए हैं, अन्य बंदी बनाए गए हैं। लेकिन हम में से कोई भी सहकर्मियों को भूख से मरते हुए याद नहीं कर सकता।'

इस संकट का कारण क्या बना?

मानवीय सहायता 2023 में इजरायल और हमास के बीच युद्ध छिड़ने के बाद से संघर्ष का एक विवादास्पद पहलू रही है। इसे अक्सर पिछले कुछ हफ्तों की युद्धविराम वार्ताओं में एक महत्वपूर्ण बिंदु के रूप में उद्धृत किया गया है।

मध्य पूर्व अध्ययन के सीएफआर वरिष्ठ फेलो स्टीवन ए. कुक ने कहा कि समय के साथ सहायता को ट्रैक करना चुनौतीपूर्ण रहा है, क्योंकि इस क्षेत्र से आने वाली जानकारी को समझना मुश्किल है और अक्सर यह भ्रामक होती है। उन्होंने कहा कि स्थिति अधिकांश रिपोर्टों की तुलना में कहीं अधिक जटिल है।

गाजा सिटी में संयुक्त राष्ट्र समर्थित संस्था ने 'पूरी तरह से मानव निर्मित' अकाल घोषित किया है, जिससे लाखों लोग भुखमरी का सामना कर रहे हैं। इजरायल इसे 'सरासर झूठ' बताते हुए हमास पर सहायता लूटने का आरोप लगाता है। यह लेख सहायता वितरण में जटिल बाधाओं, भुखमरी से हो रही मौतों और गाजा संकट के वास्तविक गुनहगार पर सवाल खड़े करता है।

वर्ष

केयर की महला ने कहा कि युद्ध के इक्कीस महीनों में सहायता का स्तर उतार-चढ़ाव भरा रहा है। लेकिन आम तौर पर, उन्होंने सीएफआर को बताया, 'यह लगातार खराब होता रहा है।' 'इस साल इसे वितरित करने की हमारी क्षमता में भारी गिरावट आई है।'

मार्च में, इज़रायल ने गाजा में सहायता शिपमेंट रोक दिए थे, जिसमें हमास द्वारा सहायता को अपने लिए निकालने का आरोप लगाया गया था, एक आरोप जिसे समूह ने नकार दिया है। यह प्रतिबंध ग्यारह सप्ताह तक चला, जब तक कि इज़रायल ने मई तक जीएचएफ के माध्यम से सहायता को वापस अंदर जाने की अनुमति नहीं दी। कुक ने कहा कि इज़रायल ने इस मॉडल का अनुसरण इसलिए किया ताकि हमास को चुराई गई सहायता का उपयोग अपने लड़ाकों को भुगतान करने के लिए राजस्व उत्पन्न करने से रोका जा सके। लेकिन जीएचएफ द्वारा अब तक लाई गई सहायता युद्ध की शुरुआत में और युद्ध से पहले प्रदान की गई सहायता की तुलना में बहुत कम है।

कुक ने समझाया, 'वे इसे इस तरह से बढ़ाने में असमर्थ थे कि इसे वास्तव में प्रभावी और सुरक्षित तरीके से वितरित किया जा सके।' 'यह स्पष्ट रूप से काम नहीं किया है और इससे कई लोगों की जान गई है।'

इज़रायली, हमास और अंतर्राष्ट्रीय भूमिकाएँ क्या रही हैं?

संयुक्त राज्य अमेरिका ने जून में GHF को कम से कम 30 मिलियन डॉलर का समर्थन दिया है - हालांकि धन की किश्तें तब तक जारी नहीं की जाएंगी जब तक GHF कुछ कार्यों को पूरा नहीं कर लेता, जिसमें भागीदारों की पूर्व-जांच शामिल है। कुक ने कहा कि डोनाल्ड ट्रम्प प्रशासन के संयुक्त राष्ट्र के प्रति अविश्वास के साथ, वैकल्पिक सहायता चैनल अधिक आकर्षक था क्योंकि यह अंतर्राष्ट्रीय निकाय से संबद्ध नहीं था, बल्कि इसके सहयोगी, इज़रायल से संबद्ध था। GHF के संचालन के IPC विश्लेषण में कहा गया है कि उनकी वर्तमान वितरण योजना 'बड़े पैमाने पर भुखमरी का कारण बनेगी, भले ही वह भयानक हिंसा के स्तर के बिना कार्य करने में सक्षम हो।'

इज़रायल में अमेरिकी राजदूत माइक हकबी ने IPC अकाल घोषणा पर इज़रायल के विवाद को जोड़ा। उन्होंने एक X पोस्ट में लिखा कि 'जो नासमझ यह दावा करते हैं कि इज़रायल गाजा को भूखा मार रहा है,' उन्हें पता होना चाहिए कि 'टनो भोजन गाजा में गया है लेकिन हमास के बर्बर लोगों ने इसे चुरा लिया।'

कुक ने कहा कि हमास और इज़रायल दोनों सहायता अराजकता के संघर्ष में भड़काने वाले हैं। उन्होंने कहा कि हमास ने सहायता स्थलों पर हिंसा को उकसाया है ताकि अराजकता पैदा हो, यह जानते हुए कि गाजा में अराजकता के लिए इज़रायल को दोषी ठहराया जाएगा। कुक ने कहा कि सहायता को प्रतिबंधित करने के लिए इज़रायल की प्रेरणाएँ दोनों हैं: इसे हमास के हाथों से दूर रखना और 'आबादी को हतोत्साहित करने' के लिए राजनीतिक नियंत्रण का एक साधन के रूप में इसका उपयोग करना।

हमास ने जोर देकर कहा है कि सहायता विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र के माध्यम से भेजी जाती है, जिससे कुछ विशेषज्ञों के बीच चिंताएं बढ़ गई हैं कि हमास संयुक्त राष्ट्र प्रणाली का लाभ उठाने में सक्षम रहा है।

कुक ने कहा, 'जो कुपोषण हो रहा है, वह स्पष्ट रूप से इस तथ्य का एक कार्य है कि इजरायलियों ने ग्यारह सप्ताह तक सहायता रोक दी और फिर GHF के इस तरीके पर चले गए।' लेकिन 'जब संयुक्त राष्ट्र सहायता एजेंसियां इसे चला रही थीं तब भी सहायता का वितरण शायद ही आसान था।'

गाजा का आगे क्या?

मानवीय निगरानी संस्थाएं सहायता लाने में नौकरशाही बाधाओं को तुरंत कम करने और सहायताकर्मियों को निशाना बनाना बंद करने का आह्वान कर रही हैं।

कनाडा, जापान और यूनाइटेड किंगडम सहित अट्ठाईस विदेश मंत्रियों के एक समूह ने मंगलवार को एक बयान में खाद्य सहायता स्थलों पर हाल ही में हुई मौतों की निंदा की और कहा कि युद्ध 'अब समाप्त होना चाहिए।' अमेरिकी मध्य पूर्व दूत स्टीव विटकॉफ ने गुरुवार को घोषणा की कि उनकी टीम युद्धविराम और बंधक सौदे में मध्यस्थता के अपने नवीनतम प्रयासों को छोटा कर रही है, यह कहते हुए कि हमास 'इच्छा की कमी दिखाता है।' उन्होंने एक बयान में कहा, 'हम अब बंधकों को घर लाने और गाजा के लोगों के लिए अधिक स्थिर वातावरण बनाने की कोशिश करने के लिए वैकल्पिक विकल्पों पर विचार करेंगे।'

युद्धविराम की अनुपस्थिति में, शेफर ने कहा, 'सैन्य सैनिकों के लिए नियम यह सुनिश्चित करने को प्राथमिकता दें कि उन निर्दोष नागरिकों के जीवन की रक्षा हो जो युद्ध के दौरान अपनी जान जोखिम में डालकर मानवीय सहायता की तलाश में हैं।'

लेकिन कुक ने आगे कहा कि 'मुझे ऐसा कोई संकेत नहीं मिला है कि व्हाइट हाउस, विदेश विभाग, या कोई भी वास्तव में इजरायलियों पर संयुक्त राष्ट्र को सहायता वितरित करने की अनुमति देने के लिए दबाव डाल रहा है। हम संयुक्त राष्ट्र को लेकर अपनी ही राजनीति से अपंग हो गए हैं।'

मेरियल फेरागामो अफ्रीका, मध्य पूर्व और वैश्विक स्वास्थ्य विषयों को कवर करती हैं। वे डेली न्यूज़ ब्रीफ की मुख्य संपादक रह चुकी हैं

Tea
Your Tagline Here

Fresh Drink

LEMON TEA

The Wonderful Taste Of Life

Order Now

www.lemonteaindia.in

ट्रंप की क्लास व यूरोप की चुप्पी

व्हाइट हाउस के दरबार में शिखर वार्ता नहीं, बल्कि अधीनता का नाटक खेला गया—ट्रंप केंद्र में, यूरोप उपपात्रों में। सभ्यता का नेता महाद्वीप आज सिर्फ़ ताली बजाने तक सीमित रह गया।

अनवर हुसैन

वॉशिंगटन की ठंडी हवा में उस दिन एक अजीब-सा नाटक खेला गया। मंच था व्हाइट हाउस का भव्य दरबार, दर्शक पूरी दुनिया, और अभिनेता—अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप और पश्चिमी यूरोप के नेता।

हर किरदार ने अपना संवाद बोला, अपनी मुद्रा गढ़ी, लेकिन असली कथा शब्दों के पीछे छुपी हुई थी।

दिखने में यह बस एक शिखर वार्ता थी। अख़बारों ने इसे यूक्रेन की जंग से जोड़कर छापा। लेकिन असली कहानी कहीं और थी—यूरोप के भीतर उस खालीपन की, जिसने उसे अपनी ही इच्छाशक्ति से वंचित कर दिया है।

नाट्यशास्त्र के नियम कहते हैं—हर नाटक में एक केंद्रीय पात्र होता है।

इस नाटक में वह पात्र ट्रंप थे, और बाक़ी सब उनके इर्द-गिर्द घूमते उपपात्र।

नाटो महासचिव मार्क रुट्टे के शब्द गूंजे—'ट्रंप हमारे लिए 'डैडी' हैं।'

यह केवल उपमा नहीं थी, बल्कि हकीकत का स्वीकार।

हर यूरोपीय नेता उस कथित डैडी-तुल्य शख़्स को नाराज़ करने से बचना चाहता था।

जैसे घर के बच्चे डैडी के ग़ुस्से से डरते हैं, वैसे ही ये प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति अपने शब्दों को नाप-तौलकर चुनते थे। कोई चापलूसी में जुटा था, कोई मुस्कान में। यहां तक कि यूक्रेन के ज़ेलेंस्की को भी सलाह दी गई—कपड़े कैसे पहनने हैं, धन्यवाद कैसे करना है।

कहानी बेतुकी लगे, लेकिन यही आज का अटल यथार्थ है। अटलांटिक के इस रिश्ते में यूरोप अपनी स्वतंत्रता खो चुका है। राजनीति अब नीति नहीं, बल्कि

मूड-मैनेजमेंट का खेल बन चुकी है।

परत दर परत निर्भरता

ट्रंप की व्यक्तित्वगत विचित्रता इस कथा का हिस्सा ज़रूर है, पर मूल कारण इससे गहरा है।

यूरोप अचानक यह मान बैठा है कि उसके रणनीतिक और आर्थिक भविष्य की चाबी वॉशिंगटन की मुट्ठी में है।

और यह सब एक रात में नहीं हुआ।

बाइडन के दौर में भी 'अभूतपूर्व एकजुटता' के नाम पर यूरोप से वहन कराया गया आर्थिक बोझ, जबकि मुनाफ़ा अमेरिका के हिस्से आया।

ट्रंप ने बस इस ढांचे से पर्दा हटा दिया। उन्होंने साफ कह दिया—'तुम साथी नहीं, साधन हो।'

वह यूरोप को भागीदारी नहीं देते, बल्कि आदेश देते हैं—

तुम्हारा काम है अमेरिकी प्राथमिकताओं को फंड करना और बाक़ी के मसौदे तैयार करना।

यूरोप की स्थिति, अगर वॉशिंगटन से अलग हो, तो उसका कोई अर्थ ही नहीं।

चापलूसी की रणनीति

तो यूरोप ने रास्ता चुना—अंधी प्रशंसा का।

नेता सोचते हैं—अगर हम ट्रंप की तारीफ़ करें, तो शायद अपनी बात धीरे से घुसा पाएँगे।

लेकिन यह भूल है।

ट्रंप तारीफ़ को तर्क नहीं मानते, उसे सत्य का प्रमाण मानते हैं।

'अगर तुम मेरी सराहना करते हो, तो इसका मतलब मैं सही हूँ।'

इस तरह यूरोप का हर ताली बजाना, उसकी ही पराजय का संगीत बन जाता है।

अस्थायी भ्रम

ब्रुसेल्स अपने आप को दिलासा देता है—'यह अपमान अस्थायी है। ट्रंप चले जाएँगे, सब सामान्य हो जाएगा।'

लेकिन यह आत्म-छलावा है।

बीस वर्षों से अमेरिका अपनी रणनीतिक दृष्टि एशिया की ओर मोड़ रहा है।

पार्टियाँ बदलीं, राष्ट्रपति बदले, पर दिशा वही रही।

ट्रंप के बाद भी यही रहेगा।

और आज जिस तरह यूरोपीय नेता घुटनों पर हैं, आने वाले किसी भी राष्ट्रपति के लिए यह नई परंपरा होगी।

दूसरों की दृढ़ता

यूरोप की यह दशा बाक़ी दुनिया से तुलना करें तो और भी असहज हो जाती है। कनाडा—जो अमेरिका के सबसे नज़दीकी पड़ोसियों में है—उसने अपने नए प्रधानमंत्री के तहत कठोर रुख़ अपनाया।

ट्रंप ने वहाँ के खिलाफ़ सुर नरम कर दिए।

चीन, भारत, ब्राज़ील और दक्षिण अफ्रीका—सभी अमेरिकी दबाव का प्रतिरोध करते हैं।

वे समझौते करते हैं, लेकिन आत्मसमर्पण नहीं।

वे टकराव से बचते हैं, लेकिन ब्लैकमेल स्वीकार नहीं करते।

सिर्फ़ यूरोप है, जो बार-बार झुकता है, और फिर इस झुकाव को बुद्धिमानी का नाम दे देता है।

आज्ञाकारिता की कीमत

इतिहास गवाह है—यूरोप हमेशा इतना भयभीत नहीं था।

सत्तर के दशक में, जब सोवियत–अमेरिकी वार्ता टूट गई थी, तब भी यूरोपीय नेताओं ने रोनाल्ड रीगन से कहा—हमारे ऊर्जा प्रोजेक्ट में मत दख़ल दो।

क्यों?

क्योंकि वह उनके हित में था।

आज वह स्पष्टता गुम हो गई है।

समस्या यह नहीं कि यूरोप अमेरिका का अनुसरण करता है।

समस्या यह है कि उसे अब अपने हित पहचानने की हिम्मत ही नहीं रही।

रूस और पुराना महाद्वीप

रूस के लिए इसका तत्काल कोई मायना नहीं।

फिलहाल रिश्ते जम चुके हैं।

लेकिन इतिहास बताता है—सबसे उपयोगी दौर वही रहे जब यूरोप ने अपने हितों के आधार पर बात की, न कि अमेरिका की छाया बनकर।

आज वह क्षमता गायब है।

यूरोप धीरे-धीरे सामूहिक राजनीतिक न्यूरोसिस में फिसल रहा है।

नेता अपने भ्रमों से दिलासा देते हैं, पर वास्तविकता यह है—महत्वाकांक्षाएँ बढ़ रही हैं, और स्वतंत्रता घटती जा रही है।

अंतिम दृश्य

इस नाटक का अंतिम दृश्य अभी लिखा नहीं गया है।

पर मंच पर जो चित्र उभर रहा है, वह विचलित करने वाला है—

एक महाद्वीप, जिसने कभी सभ्यता को दिशा दी थी, आज तालियाँ बजाने वाले पात्र की तरह किनारे खड़ा है।

उसके पास अपनी पंक्तियाँ नहीं बचीं, बस किसी और की पटकथा है।

और उस पटकथा में हर बार, हर दृश्य, हर अंत—

ओवल ऑफिस के 'बॉस' के इशारे पर लिखा जाता है।

श्रीराजेश

शीत युद्ध की राख से उठी एकध्रुवीय दुनिया अब अपने ही बोझ तले चरमराने लगी है। पश्चिमी वर्चस्व की दीवारों में दरारें गहरी होती जा रही हैं और उसी दरकन में से उभर रहा है एक नया त्रिकोण—रूस, भारत और चीन (आरआईसी)। हाथी, ड्रैगन और भालू की यह जुगलबंदी वैश्विक रंगमंच पर एक नए नाटक की पटकथा लिख रही है। प्रश्न यही है—यह गाथा विजयगाथा बनेगी या त्रासदी?

वह बीसवीं सदी के अवसान का दौर था। शीत युद्ध की राख पर जिस एकध्रुवीय विश्व व्यवस्था की भव्य इमारत खड़ी की गई थी, उसकी दीवारों में अब दरारें साफ नज़र आने लगी थीं। दशकों तक दुनिया की तकदीर लिखने का दंभ भरने वाले पश्चिमी देशों के नेतृत्व वाले इस किले की नींव हिल रही थी। 2008 के वित्तीय संकट के भूचाल ने इसकी आर्थिक चूलें हिला दीं, और अमेरिका की 'अमेरिका फर्स्ट' जैसी नीतियों के आत्म-केंद्रित कोलाहल ने उसके अपने ही सहयोगियों के मन में अविश्वास का बीज बो दिया। व्यवस्था के प्रति एक नाराजगी, एक आक्रोश पूरी दुनिया में, विशेषकर उन देशों में सुलग रहा था जिन्हें दशकों तक इस व्यवस्था में हाशिये पर रखा गया था।

वैश्विक पटल पर इस असंतोष को पहली बार ब्रिक जैसा एक गैर-पश्चिमी गठबंधनों के रूप में एक मंच 2006 में गठन होना आरंभ हुआ और 16 जून 2009 को रूस के येकातेरिनबर्ग में अपने पहले शिखर सम्मेलन के साथ एक मंच उभर कर समाने आया तथा 2010 में दक्षिण अफ्रीका के शामिल होने के बाद यह ब्रिक से ब्रिक्स बन गया। यह ग्लोबल साउथ की एक सामूहिक हुंकार थी, जो अब तक के नियंताओं को यह बताने की कोशिश थी कि खेल के नियम अब अकेले वे तय नहीं करेंगे। ब्रिक्स, जो कभी महज़ एक निवेश का जुमला लगता था, देखते ही देखते एक ऐसी संस्था में तब्दील हो गया जिसने न्यू डेवलपमेंट बैंक (एनडीबी) जैसे अपने खुद के संस्थान खड़े कर दिए, जो अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) और विश्व बैंक की पश्चिमी जागीरदारी को सीधी चुनौती दे रहे थे।

कुछ ऐसी ही परिस्थितियाँ पिछले एक दशक की वैश्विक राजनीति में भी देखी गईं। इस वैश्विक असंतोष के भीतर से एक नई धुरी को गढ़ा जा रहा था। इस धुरी को गढ़ने वाली कोई एक शक्ति नहीं थी, बल्कि इसके पीछे ऐतिहासिक अनिवार्यता और बदलता शक्ति संतुलन था। और जिस त्रिएका को इस नई विश्व व्यवस्था का आइकॉन बनना था, वे थे - रूस, भारत और चीन (आरआईसी)। इस त्रिएका को एक वैकल्पिक विश्व व्यवस्था की मौजूदगी, वैश्विक समस्याओं का एक गैर-पश्चिमी समाधान प्रदाता की छवि और अपने पश्चिमी विरोधियों के खिलाफ एक वातावरण भी सृजित करना था। और साथ ही यह संदेश भी देना था कि इस एकध्रुवीय दुनिया के दबाव भरे वातावरण से केवल वही छुटकारा दिला सकते हैं।

इस पूरे परिदृश्य के पीछे, एक बहुध्रुवीय विश्व की चाहत नियोजित ढंग से अपनी भूमिका निभा रही थी। रूस, भारत और चीन के लिए इस नई भूमिका में यह साफ था कि उन्हें अपनी जुगलबंदी ऐसी रखनी है कि लगभग पंगु हो चुकी पुरानी अमेरिका केंद्रित विश्व-व्यवस्था का एक ही विकल्प केवल वहीं हैं। देखते ही देखते इस त्रिएका ने पश्चिमी नेतृत्व की सारी विफलताओं को अपने हक में सफलता की कुंजी बनाने में सफल होती दिखी और ग्लोबल साउथ के हताश-निराश माहौल में उम्मीद की किरण बनकर उभरने लगी। रही सही कसर, अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के दूसरे कार्यकाल की नीतियों ने पूरी कर दी।

और यहीं से एक नए युग के आरंभ की आहट सुनाई देने

RIC

अग्निपथ ! अग्निपथ ! अग्निपथ !

एक नई विश्व व्यवस्था की कठिन राह

लगी। एक ऐसा युग जहाँ रूस-भारत-चीन की यह धुरी, ब्रिक्स+ के विशाल रथ का संचालन करने वाली शक्ति के रूप में देखी जा रही है। लेकिन सवाल यह है कि क्या यह त्रिएका वास्तव में एक साथ मिलकर चल पाएगी? क्या हाथी (भारत), ड्रैगन (चीन) और भालू (रूस) की यह जुगलबंदी वैश्विक रंगमंच पर एक नया इतिहास लिख पाएगी, या फिर उनके अपने ही अंतर्विरोध इस पटकथा को त्रासदी में बदल देंगे? भारत के लिए यह केवल एक वैश्विक घटनाक्रम नहीं, बल्कि एक अग्निपथ है, जिस पर हर कदम फूंक-फूंक कर रखना होगा।

त्रिएका के तीन चेहरे

वैश्विक रंगमंच पर आरआईसी का पुनरुत्थान एक ऐसे नाटक की तरह है जिसके तीनों मुख्य किरदारों की अपनी-अपनी पटकथा है, अपनी मजबूरियां हैं, और अपने लक्ष्य हैं। वे एक मंच पर तो हैं, लेकिन उनकी निगाहें अलग-अलग दिशाओं में हैं। इन किरदारों की मन की परतों को खोले बिना इस नाटक की दिशा को समझना नामुमकिन है।

किरदार नंबर एक: रूस

आज इस त्रिपक्षीय संवाद के लिए यदि कोई सबसे अधिक बेचैन है, तो वह रूस है। 2022 में यूक्रेन पर हमले के बाद पश्चिम के प्रतिबंधों की बेड़ियों में जकड़ा रूस, अपनी राजनयिक तन्हाई को तोड़ने के लिए पूरब के दरवाज़े पर दस्तक दे रहा है। उसके लिए आरआईसी महज़ एक कूटनीतिक मंच नहीं, बल्कि अपने अस्तित्व को बचाने और यह साबित करने का एक ज़रिया है कि वह अभी भी विश्व का एक अहम खिलाड़ी है। रूसी विदेश मंत्री सर्गेई लावरोव का आरआईसी को फिर से ज़िंदा करने का आह्वान, मॉस्को के मन में चल रही दोहरे द्वंद को दर्शाता है।

पहला, यह पश्चिम को एक खुला संदेश है कि तुम्हारी चौधराहट के दिन लद गए। तुम हमें अलग-थलग करने की जितनी कोशिश करोगे, हम उतने ही मज़बूत नए साथी ढूंढ लेंगे। दूसरा, और शायद ज़्यादा महत्वपूर्ण, यह चीन के आगोश में पूरी तरह समा जाने के डर से खुद को बचाने की एक कोशिश है। आज रूस की अर्थव्यवस्था और राजनीति चीन पर खतरनाक हद तक निर्भर हो चुकी है। उनका द्विपक्षीय व्यापार आसमान छू रहा है, लेकिन मॉस्को इस रिश्ते की विषमता से वाकिफ है। वह जानता है कि इस रिश्ते में वह एक जूनियर पार्टनर बनता जा रहा है। ऐसे में, आरआईसी का मंच उसे चीन के साथ बराबरी पर खड़े होकर बात करने का एक मनोवैज्ञानिक संबल देता है। इस मंच पर भारत की मौजूदगी, रूस को चीन पर अपनी निर्भरता को संतुलित करने का एक अनमोल अवसर प्रदान करती है। रूस के लिए, आरआईसी अपनी खोई हुई वैश्विक प्रतिष्ठा को फिर से पाने और यूरेशिया में अपनी प्रासंगिकता बनाए रखने की संजीवनी बूटी है।

किरदार नंबर दो: चीन

चीन का आरआईसी के प्रति प्रेम किसी भावनात्मक लगाव का परिणाम

नहीं, बल्कि एक सोची-समझी रणनीति का हिस्सा है। ड्रैगन की नज़रें ताइवान और दक्षिण चीन सागर पर गड़ी हैं। उसका सारा ध्यान अपनी सेना को दुनिया की सबसे ताकतवर सेना बनाने पर है। ऐसे में, वह नहीं चाहता कि भारत के साथ उसकी ज़मीनी सरहद पर कोई नया मोर्चा खुले। 2020 की गलवान की खूनी झड़प के बाद से भारत के साथ रिश्ते जिस बर्फ में जम गए हैं, आरआईसी उस बर्फ को पिघलाने के लिए एक धीमी आंच का काम कर रहा है। यह चीन को भारत के साथ एक नियंत्रित संवाद बनाए रखने का मौका देता है, बिना सीमा विवाद जैसे असल मुद्दे पर कोई ठोस रियायत दिए।

इसके अलावा, चीन अमेरिका के साथ एक चौतरफा मुकाबले में उलझा हुआ है। व्यापार युद्ध से लेकर तकनीकी प्रभुत्व तक, हर मोर्चे पर वाशिंगटन उसे घेरने की कोशिश कर रहा है। ऐसे में, चीन आरआईसी और ब्रिक्स जैसे मंचों का इस्तेमाल यह दिखाने के लिए करता है कि वह अकेला नहीं है, और दुनिया के कई बड़े देश अमेरिकी व्यवस्था के खिलाफ उसके साथ खड़े हैं। यह ग्लोबल साउथ को लुभाने और यह संदेश देने की एक कोशिश है कि भविष्य की दुनिया का नेतृत्व बीजिंग करेगा, वाशिंगटन नहीं। लेकिन चीन अपनी दादागिरी दिखाने से भी नहीं चूकता। कभी दुर्लभ खनिजों के निर्यात पर रोक लगाकर भारत के ऑटो उद्योग को परेशान करना, तो कभी उर्वरकों की खेप रोक देना - ये छोटी-छोटी हरकतें यह याद दिलाने के लिए काफी हैं कि इस रिश्ते में बड़ा भाई कौन है। चीन के लिए, आरआईसी अपने बड़े रणनीतिक खेल का महज़ एक मोहरा है।

किरदार नंबर तीन: भारत

और फिर आता है भारत - वह हाथी जो अपनी मंथर लेकिन सधी हुई चाल से इस जटिल भू-राजनीतिक जंगल में अपना रास्ता तलाश रहा है। भारत के लिए आरआईसी एक ऐसी पहेली है, जिसे सुलझाना उसकी मजबूरी भी है और ज़रूरत भी। भारत हमेशा से एक बहुध्रुवीय विश्व का सपना देखता आया है, जहाँ किसी एक देश की मनमानी न चले। लेकिन आज वह एक अजीब चौराहे पर खड़ा है। एक तरफ अमेरिका और पश्चिम के साथ उसकी गहरी होती रणनीतिक और आर्थिक साझेदारी है, तो दूसरी तरफ रूस के साथ दशकों पुरानी, समय की कसौटी पर खरी उतरी दोस्ती।

लेकिन अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ट ट्रंप की नीतियां अमेरिका के साथ लगभग तीन दशकों में बनी विश्वास के सेतु को तोड़ रहा है। चाहे ऑपरेशन सिंदूर में सीजफायर कराने के ट्रंप के दावे हो या फिर भारत से ट्रेड डील का ना होना और 25 प्रतिशत तक के भारी टैरिफ, तिस पर तुर्रा रूस से तेल लेने पर 25 प्रतिशत अतिरिक्त टैरिफ बतौर जुर्माना।

ऐसी परिस्थितियों से बचने के लिए, भारत ने 'रणनीतिक स्वायत्तता' का मंत्र अपनाया है। वह किसी एक खेमे का पिछलग्गू बनने से इनकार करता है। आरआईसी इसी स्वायत्तता को बनाए रखने का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। यह भारत को एक ऐसा मंच देता है जहाँ वह पश्चिम के

बीसवीं सदी के अंत में शीत युद्ध के बाद बनी एकध्रुवीय विश्व व्यवस्था की दरारें अब स्पष्ट हो रही हैं। 2008 के वित्तीय संकट और 'अमेरिका फर्स्ट' नीतियों ने पश्चिमी प्रभुत्व की नींव हिलाई। इसी पृष्ठभूमि में, ब्रिक्स और रूस-भारत-चीन (आरआईसी) जैसे गैर-पश्चिमी गठबंधन उभरे, जो ग्लोबल साउथ की सामूहिक आवाज़ बने। ये समूह पश्चिमी संस्थानों को चुनौती देते हुए एक बहुध्रुवीय विश्व की चाहत और गैर-पश्चिमी समाधानों की पेशकश कर रहे हैं। यह एक नया युग है, जहाँ आरआईसी ब्रिक्स+ के संचालन की शक्ति के रूप में देखा जा रहा है।

दबाव को संतुलित कर सकता है, रूस के साथ अपने संबंधों को ऊर्जा दे सकता है, और सबसे महत्वपूर्ण, चीन के साथ तनाव के बावजूद बातचीत का एक दरवाजा खुला रख सकता है। यह एक बेहद नाजुक संतुलन है। जब भारत चीनी नागरिकों के लिए वीज़ा नियम आसान करता है या चीनी निवेश के लिए दरवाज़े खोलता है, तो वह दुनिया को यह संकेत देता है कि वह संवाद का विरोधी नहीं है, लेकिन साथ ही वह सीमा पर अपनी फौलादी पकड़ भी बनाए रखता है। भारत के लिए, आरआईसी एक रणनीतिक बचाव है, एक ऐसा विकल्प जिसे वह अपनी विदेश नीति के तरकश में हमेशा रखना चाहेगा।

दरारें और अंतर्विरोध

इस त्रिएका की तस्वीर बाहर से जितनी आकर्षक दिखती है, अंदर से उतनी ही खोखली और दरारों से भरी है। कई ऐसे अनसुलझे सवाल और गहरे अंतर्विरोध हैं, जो इस कथित गठबंधन की नींव को किसी भी समय हिला सकते हैं।

अविश्वास की अनसुलझी गांठ

इस त्रिकोण का सबसे कमज़ोर कोना, इसकी 'अकिलीज़ हील', भारत और चीन के बीच हिमालय की बर्फीली चोटियों पर खिंची अनसुलझी सरहद है। यह महज़ एक सीमा विवाद नहीं, बल्कि दो सभ्यताओं के बीच गहरे अविश्वास का एक नासूर है जो दशकों से रिस रहा है। 2020 में गलवान घाटी में भारतीय सैनिकों का बलिदान उस अविश्वास की खाई को और गहरा कर गया। हालांकि लद्दाख के कुछ इलाकों में तनाव कम करने के लिए समझौते हुए हैं, लेकिन यह महज़ घाव पर मरहम लगाने जैसा है, रोग का इलाज नहीं। जब तक चीन सीमा पर यथास्थिति को एकतरफा बदलने की अपनी कोशिशें बंद नहीं करता और भारत की संप्रभुता का सम्मान नहीं करता, तब तक दोनों देशों के बीच सच्चा विश्वास बहाल होना एक ख्वाब ही रहेगा। यह अविश्वास आरआईसी की आत्मा पर एक भारी बोझ है।

भला वे देश दुनिया का नया नक्शा कैसे खींच सकते हैं, जो अपने घर का नक्शा ही तय नहीं कर पा रहे? भारत के लिए, चीन के साथ किसी भी मंच पर खड़ा होना, पीठ पर छुरा घोंपने के जोखिम के साथ आता है। हालांकि इसी महीने चीनी विदेशमंत्री वांग यी के भारत दौरे से संबंधों के बीच जमी बर्फ पिघलनी शुरू हुई है, और जहां जटिलताएं कम है, वहां दोनों देशों के बीच के सीमा के निर्धारण पर सहमति बनी है। इसी तरह सितंबर से शुरूआती सप्ताह में होने वाले एससीओ समेमेलन में भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जाने वाले हैं, वहां उनकी मुलाकात न केवल शी जिंगपिंग से होगी बल्कि वहां वह ब्लादिमीर पुतिन से भी मुलाकात करेंगे। उम्मीद है कि स्थितियां सकारात्मक ढंग से आगे बढ़ेंगी।

भारत के लिए खतरे की घंटी

एक और बड़ा खतरा रूस और चीन के बीच पनपता वह 'अटूट' भाईचारा है, जो नई दिल्ली के सत्ता के गलियारों में चिंता की लकीरें खींच रहा है। यूक्रेन युद्ध ने रूस को इतना कमजोर और अकेला कर दिया है कि वह चीन का एक जूनियर पार्टनर बनने पर मजबूर हो गया है। यह जुगलबंदी आरआईसी के भीतर शक्ति संतुलन को खतरनाक रूप से चीन के पक्ष में झुका देती है। भारत के मन में यह डर स्वाभाविक है कि कहीं आरआईसी एक ऐसा मंच न बन जाए जहाँ बीजिंग और मॉस्को मिलकर नई दिल्ली पर किसी खास मुद्दे पर झुकने के लिए दबाव डालें। भारत इस त्रिकोण में तीसरा कोण बनकर रहना चाहता है, न कि दो कोणों द्वारा बनाया गया शिकार। यदि रूस अपनी स्वतंत्र विदेश नीति की पहचान खो देता है और पूरी तरह से चीन की धुन पर नाचने लगता है, तो आरआईसी भारत के लिए एक फायदेमंद मंच के बजाय एक खतरनाक जाल बन सकता है।

अर्थतंत्र की उलझी डोर

इस त्रिकोण की नींव सिर्फ राजनीति ही नहीं, बल्कि अर्थव्यवस्था पर भी टिकी है, और यह नींव भी बहुत मज़बूत नहीं है। भारत और चीन के बीच व्यापार तो बहुत है, लेकिन यह एकतरफा है। भारत का बाज़ार चीनी सामानों से पटा पड़ा है, जबकि चीन के बाज़ार में भारतीय उत्पादों की पहुंच बहुत सीमित है। यह भारी व्यापार घाटा भारत की अर्थव्यवस्था के लिए एक सतत सिरदर्द है। यही हाल रूस के साथ भी है, जहाँ भारत भारी मात्रा में तेल और हथियार तो खरीदता है, लेकिन अपने उत्पादों के लिए रूसी बाज़ार नहीं खोल पाता।

इसके अलावा, तीनों देशों के नियम-कानून, व्यापार करने के तरीके, और तकनीकी मानक इतने अलग हैं कि एक सहज आर्थिक एकीकरण लगभग असंभव लगता है। भारत का डिजिटल डेटा कानून, चीन के सरकारी नियंत्रण वाले इंटरनेट मॉडल से मेल नहीं खाता। जब तक ये संरचनात्मक बाधाएं दूर नहीं होतीं, तब तक आरआईसी एक प्रभावी आर्थिक गुट नहीं बन सकता।

क्या यह त्रिएका रच पाएगी इतिहास?

इन तमाम चुनौतियों और कांटों के बावजूद, आरआईसी के आंगन में संभावनाओं के कुछ फूल खिलने की उम्मीद अभी बाकी है। यदि ये तीनों देश अपने मतभेदों को किनारे रखकर साझा हितों पर ध्यान केंद्रित करें, तो वे न केवल अपने लिए, बल्कि पूरे ग्लोबल साउथ के लिए एक नई सुबह ला सकते हैं।

एक नई आर्थिक व्यवस्था की नींवः भारत का यूपीआई आज दुनिया में डिजिटल भुगतान की क्रांति का प्रतीक बन चुका है। चीन के पास भी अलीपे जैसा मजबूत प्लेटफॉर्म है। यदि ये देश मिलकर एक साझा डिजिटल भुगतान प्रणाली विकसित करें, तो वे डॉलर और पश्चिमी वित्तीय प्रणालियों पर अपनी निर्भरता को काफी हद तक कम कर सकते हैं। 2025 का पनडुब्बी इंटरनेट केबल प्रोजेक्ट भी इसी दिशा में एक कदम है, जो डेटा के प्रवाह के लिए पश्चिमी बुनियादी ढांचे की गुलामी से मुक्ति दिला सकता है।

आरआईसी त्रिएका, यानी रूस, भारत और चीन, वैश्विक मंच पर एक नए नाटक के मुख्य किरदार हैं, जिनके अपने अलग-अलग लक्ष्य और मजबूरियां हैं। यूक्रेन युद्ध के बाद रूस पश्चिमी प्रतिबंधों से बचने और चीन पर निर्भरता कम करने के लिए इस मंच को देखता है। चीन, अमेरिका के साथ प्रतिस्पर्धा करते हुए और सीमा विवादों पर नियंत्रण बनाए रखते हुए, भारत से नियंत्रित संवाद चाहता है।

तकनीक और नवाचार में साझेदारीः चीन हरित ऊर्जा और 5जी में दुनिया का अगुआ है। भारत सौर ऊर्जा और सॉफ्टवेयर में अपनी धाक जमा चुका है। रूस के पास अंतरिक्ष और रक्षा प्रौद्योगिकी का विशाल अनुभव है। यदि ये तीनों देश मिलकर अनुसंधान और विकास में सहयोग करें, तो वे अगली पीढ़ी की प्रौद्योगिकियों में पश्चिम को कड़ी टक्कर दे सकते हैं।

वैश्विक मंचों पर बुलंद आवाज़ः संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद जैसी संस्थाएं आज भी 1945 की दुनिया का प्रतिनिधित्व करती हैं। आरआईसी एक साथ मिलकर इन संस्थाओं में सुधार के लिए दबाव बना सकता है, ताकि भारत जैसी उभरती शक्तियों को उनका वाजिब हक मिल सके और ग्लोबल साउथ की आवाज़ को अनसुना न किया जा सके।

भारत के लिए अग्निपथ

अंततः, रूस-भारत-चीन की यह उभरती धुरी भारत के लिए एक अवसर भी है और एक चुनौती भी। यह एक ऐसा अग्निपथ है जिस पर चलकर भारत को अपनी कूटनीतिक कुशलता और राष्ट्रीय संकल्प, दोनों की परीक्षा देनी होगी।

भारत के लिए आगे की राह साफ है, लेकिन आसान नहीं। उसकी रणनीति के तीन स्तंभ होने चाहिएः

सीमा पर फौलादी इरादेः चीन के साथ बातचीत के दरवाज़े भले ही खुले रहें, लेकिन सीमा पर किसी भी तरह की ढिलाई या कमजोरी की कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। भारत को अपनी सैन्य और ढांचागत क्षमताओं को लगातार मज़बूत करते रहना होगा, क्योंकि सम्मान और सुरक्षा शक्ति से ही आती है।

बहु-संरेखण का सुरक्षा कवचः भारत को अपनी सारी उम्मीदें आरआईसी से नहीं बांधनी चाहिए। उसे अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया के साथ क्वाड को भी मज़बूत करना होगा। यूरोप, आसियान और मध्य पूर्व के देशों के साथ अपने संबंधों को भी गहरा करना होगा। एक ओर आरआईसी के साथ संवाद का धागा पकड़े रखना, तो दूसरी ओर क्वाड के मंच पर अपने लोकतांत्रिक साझेदारों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ा होना - यही वह कूटनीतिक कलाबाजी है जो आज भारत की नियति बन चुकी है।

व्यावहारिक और मुद्दे-आधारित सहयोगः आरआईसी के भीतर, भारत को भावनात्मक नारों से बचकर शुद्ध व्यावहारिक हितों पर ध्यान देना होगा। आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन, व्यापार और कनेक्टिविटी जैसे मुद्दों पर जहाँ हित मिलते हों, वहाँ सहयोग करना चाहिए, लेकिन रणनीतिक मुद्दों पर अपनी लक्ष्मण रेखा को कभी पार नहीं करना चाहिए।

ड्रैगन, भालू और हाथी की यह जुगलबंदी वैश्विक राजनीति का सबसे दिलचस्प और शायद सबसे महत्वपूर्ण नाटक है। वे शायद कभी भी एक सुर में नहीं गा पाएंगे, लेकिन दुनिया के बदलते संगीत में, उन्हें एक साथ मंच पर बने रहने का एक तरीका खोजना होगा। भारत के लिए इस नाटक में अपनी भूमिका को कुशलता से निभाना, अपनी स्वायत्तता को बनाए रखना और अपने राष्ट्रीय हितों को साधना, 21वीं सदी की सबसे बड़ी चुनौती है। यह एक ऐसा संघर्ष है जो दिल्ली के सत्ता के गलियारों में नहीं, बल्कि कूटनीति की वैश्विक चौसर पर लड़ा जाएगा, और इसका परिणाम ही तय करेगा कि भविष्य के इतिहास में भारत का स्थान क्या होगा।

ब्रोमांस की राख पर नया ग्लोबल भूचाल

भारत–अमेरिका रिश्तों की दरार से हिलती वैश्विक कूटनीति की बिसात

'हाउडी मोदी' से गूंजते स्टेडियम और 'नमस्ते ट्रंप' की चमकते लम्हें अब इतिहास बन चुके हैं। दोस्ती की वह गर्मजोशी राख में बदल चुकी है—और उसी राख से उठा है नया भूचाल। जंजीरों में जकड़े प्रवासी, 'ऑपरेशन सिंदूर' का झूठा श्रेय और 50% टैरिफ की गूंज ने न सिर्फ भारत–अमेरिका रिश्तों को दरका दिया, बल्कि वैश्विक राजनीति की नींव को भी हिला डाला। और इस हकीकत के सूत्रधार हैं—डोनाल्ड ट्रंप।

सच्चिदानंद

एक दौर था जब भारत-अमेरिका की दोस्ती की मिसालें दी जाती थीं। ह्यूस्टन के भव्य स्टेडियम में 'हाउडी मोदी' की गूंज और अहमदाबाद के मोटेरा में 'नमस्ते ट्रंप' का जयघोष, दुनिया ने दो लोकतांत्रिक देशों के दो मजबूत नेताओं के बीच पनपते इस अनूठे याराने को बड़ी उम्मीद से देखा था। यह दोस्ती सिर्फ तस्वीरों और गर्मजोशी से हाथ मिलाने तक सीमित नहीं थी; यह रणनीतिक साझेदारी की एक ऐसी भव्य इमारत थी जिसे पिछले तीन दशकों में दोनों देशों ने बड़ी मेहनत से, ईंट-दर-ईंट खड़ा किया था। इस इमारत की नींव में साझा लोकतांत्रिक मूल्य थे, आतंकवाद के खिलाफ साझा लड़ाई थी, और चीन के बढ़ते दबदबे को संतुलित करने का एक साझा रणनीतिक संकल्प था।

लेकिन राजनीति की बिसात पर, दोस्ती की सुनहरी तस्वीरें अक्सर एक क्रूर हकीकत की पहली किश्त होती हैं। जब डोनाल्ड ट्रंप ने जनवरी 2025 में व्हाइट हाउस में दोबारा वापसी की, तो भारत के कई रणनीतिकारों के मन में एक सुकून था। उन्हें लगा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ ट्रंप की व्यक्तिगत केमिस्ट्री, वह 'ब्रोमांस' जिसे दुनिया ने देखा था, भारत के लिए एक सुरक्षा कवच का काम करेगा। यह सोचा गया था कि ट्रंप के अप्रत्याशित और उथल-पुथल भरे मिजाज से दुनिया भले ही कांपे, लेकिन भारत इस तूफान से महफूज रहेगा।

मगर छह महीने के भीतर ही, यह सुनहरा ख्वाब एक बुरे सपने में तब्दील होने लगा। दोस्ती का वह कैनवास, जिस पर उम्मीदों के रंग भरे गए थे, अब अविश्वास और दबाव की स्याही से बदरंग हो रहा था। यह कहानी शुरू हुई अमेरिका में भारतीय प्रवासियों के जंजीरों में जकड़े स्वाभिमान की तस्वीरों से, फिर यह 'ऑपरेशन सिंदूर' के उस अजीबोगरीब दावे तक पहुंची, जहां ट्रंप ने खुद को भारत-पाकिस्तान के बीच शांतिदूत के रूप में पेश करने की कोशिश की, और अंततः यह रूसी तेल की खरीद को लेकर भारत पर लगाए गए भारी-भरकम टैरिफ के उस आर्थिक प्रहार पर आ पहुंची है, आगे कहां तक जाएगी- कहना मुश्किल है, लेकिन इस सबने इस रिश्ते की नींव को ही हिलाकर रख दिया। देखते ही देखते, रणनीतिक साझेदारी की वह भव्य इमारत दरकने लगी। भारत-अमेरिका संबंध दशकों के अपने सबसे निचले स्तर पर आ गए। संवैधानिक संस्थाएं जिस तरह भारत में एक केंद्रीकृत शासन व्यवस्था की जकड़न में जकड़ी महसूस कर रही थीं, उसी तरह वैश्विक पटल पर भारत की विदेश नीति ट्रंप की अप्रत्याशित और एकतरफा कार्रवाइयों की जकड़न में फंसती नजर आने लगी। यह सिर्फ दो देशों का द्विपक्षीय मामला नहीं था; इसका असर वैश्विक भू-राजनीति की शतरंज पर हर मोहरे की चाल को प्रभावित कर रहा था। हालात कैसे और क्यों बदले, इसकी परतों को खोलना और यह समझना आज की सबसे बड़ी जरूरत है कि इस दोस्ती के मलबे के नीचे दफन क्या है - एक अस्थायी गलतफहमी या एक स्थायी दरार?

जंजीरों में जकड़ा स्वाभिमान

इस रिश्ते में पहली गहरी और सार्वजनिक दरार तब पड़ी, जब फरवरी 2025 में, प्रधानमंत्री मोदी की व्हाइट हाउस यात्रा से ठीक पहले, दुनिया ने वे तस्वीरें देखीं जिन्होंने हर भारतीय के मन को झकझोर कर रख दिया। अमेरिकी सैन्य विमान की ओर बढ़ते भारतीय नागरिक, जिनके हाथ और पैर जंजीरों से बंधे थे। वे कोई खूंखार अपराधी नहीं, बल्कि अवैध अप्रवासी थे, जिन्होंने बेहतर जिंदगी की तलाश में अमेरिका की धरती पर कदम रखा था। उन्हें घंटो लंबी उड़ान के दौरान जानवरों की तरह जंजीरों में बांधकर वापस भेजा गया।

यह ट्रंप की 'मेक अमेरिका ग्रेट अगेन' (मागा) की उस कट्टर विचारधारा का नग्न प्रदर्शन था, जिसके लिए अप्रवासियों का दानवीकरण करना एक चुनावी जरूरत है। यह उनकी घरेलू राजनीति का एक क्रूर नाटक था, जिसका मंचन भारत के स्वाभिमान की कीमत पर किया जा रहा था। भारत में गुस्सा भड़क उठा। विपक्ष ने संसद में हथकड़ियां पहनकर प्रदर्शन किया और सवाल पूछा कि अगर ट्रंप प्रधानमंत्री मोदी के इतने ही अच्छे दोस्त हैं, तो नई दिल्ली अपने

नागरिकों के साथ हो रहे इस 'अमानवीय' और 'अपमानजनक' व्यवहार को क्यों नहीं रोक पा रही?

यह घटना मोदी सरकार के लिए एक कठिन कूटनीतिक पहेली बन गई। एक तरफ अपने नागरिकों के सम्मान का सवाल था, तो दूसरी तरफ ट्रंप जैसे अप्रत्याशित नेता को नाराज करने का जोखिम। सरकार ने संसद में यह कहकर बचाव करने की कोशिश की कि यह अमेरिका की एक पुरानी प्रक्रिया है, लेकिन यह तर्क किसी के गले नहीं उतरा। सच तो यह था कि ट्रंप अपनी घरेलू राजनीति को किसी भी दोस्ती या रणनीतिक साझेदारी से ऊपर रख रहे थे। उन्होंने यह स्पष्ट संदेश दिया था कि उनके लिए अपने वोट बैंक को खुश करना भारत के साथ संबंधों की परवाह करने से ज्यादा महत्वपूर्ण है। यह पहला बड़ा आघात था, जिसने यह दिखा दिया कि इस 'ब्रोमांस' की नींव कितनी खोखली है और यह किसी भी समय ट्रंप के राजनीतिक हितों की भेंट चढ़ सकती है।

दोस्ती का मिथक

अगर जंजीरों की तस्वीरों ने रिश्ते में एक दरार डाली थी, तो ट्रंप के अगले कदम ने उस दरार को एक गहरी खाई में बदल दिया। अप्रैल 2022 में कश्मीर के पहलगाम में हुए आतंकी हमले के बाद भारत और पाकिस्तान दशकों के सबसे बड़े सैन्य टकराव में उलझ गए थे। भारत ने 'ऑपरेशन सिंदूर' लॉन्च किया और दोनों परमाणु-संपन्न देश युद्ध के कगार पर खड़े थे। 10 मई को जब दोनों देशों के बीच संघर्ष विराम हुआ, तो दुनिया ने राहत की सांस ली।

लेकिन तभी डोनाल्ड ट्रंप ने एक ऐसा दावा किया जिसने नई दिल्ली में भूचाल ला दिया। उन्होंने बार-बार, लगभग 30 से अधिक बार, यह कहना शुरू कर दिया कि यह सीजफायर उन्होंने कराई है। उन्होंने इसे इतनी बार दोहराया कि भारत में उन्हें मजाकिया तौर मि. सीजफायर तक कहा जाने लगा। उन्होंने कहा, 'मैंने दोनों देशों से कहा कि या तो युद्ध बंद करो, वरना व्यापार बंद हो जाएगा।' उन्होंने खुद को एक महान शांतिदूत के रूप में पेश किया, जिसके एक इशारे पर दो परमाणु शक्तियां लड़ने से रुक गईं।

यह भारत की संप्रभुता और उसकी दशकों पुरानी विदेश नीति पर एक सीधा हमला था। भारत हमेशा से यह मानता आया है कि पाकिस्तान के साथ उसके सभी विवाद द्विपक्षीय हैं और इसमें किसी तीसरे पक्ष की मध्यस्थता की कोई जगह नहीं है। ट्रंप का यह दावा न केवल झूठा था, बल्कि यह भारत को एक ऐसे कमजोर देश के रूप में चित्रित करने की कोशिश थी जो अपने फैसले खुद नहीं ले सकता। प्रधानमंत्री मोदी और विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने संसद से लेकर हर मंच पर इसका पुरजोर खंडन किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि संघर्ष विराम के दौरान मोदी और ट्रंप के बीच कोई बातचीत नहीं हुई थी और इसमें व्यापार का कोई लेना-देना नहीं था।

लेकिन ट्रंप अपने झूठ पर अड़े रहे। उनके लिए यह हकीकत का सवाल नहीं, बल्कि अपनी छवि चमकाने का एक मौका था। वह खुद को नोबेल शांति पुरस्कार के दावेदार के रूप में देख रहे थे। इस प्रकरण ने भारत को और भी असहज कर दिया क्योंकि ठीक इसी समय, ट्रंप प्रशासन पाकिस्तान के साथ नज़दीकियां बढ़ा रहा था। पाकिस्तानी सेना प्रमुख को व्हाइट हाउस में अभूतपूर्व स्वागत दिया गया, जिसे ट्रंप ने शांति स्थापित करने में 'बेहद प्रभावशाली' बताया। यह भारत के लिए एक दोहरा झटका थाः एक तरफ, उसका सबसे करीबी रणनीतिक साझेदार उसकी संप्रभुता को कमजोर कर रहा था, और दूसरी तरफ, वह उसके सबसे बड़े प्रतिद्वंद्वी को गले लगा रहा था। दोस्ती का नकाब अब पूरी तरह उतर चुका था और उसके पीछे एक शुद्ध लेन-देन पर आधारित, आत्म-केंद्रित चेहरा साफ नजर आ रहा था।

टैरिफ का महायुद्ध

इस रिश्ते के ताबूत में आखिरी कील ट्रंप के आर्थिक ब्रह्मास्त्र ने ठोकी। वजह बनी भारत की रूस के साथ पुरानी और समय की कसौटी पर खरी उतरी दोस्ती। यूक्रेन युद्ध शुरू होने के बाद, जब पश्चिमी देशों ने रूस पर प्रतिबंध लगाए, तो भारत ने अपनी ऊर्जा सुरक्षा की जरूरतों को देखते हुए रूस से रियायती दरों पर कच्चा तेल खरीदना जारी रखा। यह भारत की 'रणनीतिक स्वायत्तता' की नीति का एक स्वाभाविक विस्तार था। बिडेन प्रशासन ने इस मजबूरी को समझा था और भारत पर कभी सीधा दबाव नहीं बनाया था।

लेकिन ट्रंप के लिए यह अस्वीकार्य था। वह यूक्रेन में शांति वार्ता को लेकर रूस के राष्ट्रपति पुतिन पर दबाव बनाना चाहते थे, और भारत उन्हें एक आसान बलि का बकरा नजर आया। उन्होंने भारत पर यह आरोप लगाना शुरू कर दिया कि वह रूस की 'युद्ध मशीन' को वित्तीय मदद दे रहा है। ट्रंप के सहयोगी स्टीफन मिलर और पीटर नवारो जैसे लोगों ने सार्वजनिक रूप से भारत को दोषी ठहराया।

इसके बाद जो हुआ, वह अभूतपूर्व था। जुलाई के अंत में, ट्रंप ने भारतीय आयातों पर 25 प्रतिशत का भारी-भरकम टैरिफ लगा दिया। लेकिन वह यहीं नहीं रुके। उन्होंने घोषणा की कि यदि भारत ने रूसी तेल खरीदना बंद नहीं किया तो इस टैरिफ को दोगुना करके 50 प्रतिशत कर दिया जाएगा। यह एक रणनीतिक साझेदार के साथ किया जाने वाला व्यवहार नहीं था; यह एक दुश्मन के साथ किया जाने वाला आर्थिक युद्ध था।

भारत ने इस पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की। विदेश मंत्रालय ने इसे 'अनुचित, अन्यायपूर्ण और अतार्किक' बताया और कहा कि भारत अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए सभी आवश्यक कदम उठाएगा। भारत ने पश्चिमी देशों के दोहरे मापदंडों की ओर भी इशारा किया, यह बताते हुए कि यूरोप खुद भारत से कहीं ज्यादा रूस के साथ व्यापार कर रहा था और अमेरिका भी रूस से उर्वरक और रसायन आयात कर रहा था।

भारत के साथ संबंधों में आई गिरावट केवल नई दिल्ली की चिंता नहीं है, बल्कि वाशिंगटन की सियासत के भीतर भी इसकी गूंज सुनाई देने लगी है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के दूसरे कार्यकाल में उठाए गए

TRUMP
TRUMP
TRUMP

कभी 'हाउडी मोदी' और 'नमस्ते ट्रंप' से सजे भारत-अमेरिका संबंध, डोनाल्ड ट्रंप के दूसरे कार्यकाल में नाटकीय रूप से बिगड़ गए हैं। छह महीनों के भीतर, भारतीय प्रवासियों के अपमान, 'ऑपरेशन सिंदूर' पर ट्रंप के भ्रामक दावे और रूसी तेल खरीद पर भारत पर लगे भारी टैरिफ ने दशकों की रणनीतिक साझेदारी की नींव हिला दी। यह लेख बताता है कि कैसे दोस्ती का सुनहरा ख्वाब अविश्वास और दबाव की स्याही से बदरंग हो गया, जिससे दोनों देशों के रिश्ते दशकों के निचले स्तर पर पहुँच गए हैं, और इसका वैश्विक भू-राजनीति पर क्या असर हो रहा है।

कई निर्णयों ने दशकों में निर्मित रणनीतिक साझेदारी की नींव को हिला दिया है। नतीजा यह है कि अमेरिका की ही कई बड़ी हस्तियां अब खुले तौर पर इन कदमों की आलोचना कर रही हैं। पूर्व संयुक्त राष्ट्र राजदूत और रिपब्लिकन नेता निक्की हेली ने ट्रंप प्रशासन द्वारा भारतीय अप्रवासियों को जंजीरों में बांधकर डिपोर्ट करने की कार्रवाई को 'अमानवीय और शर्मनाक' बताया। उनका कहना था कि यह न केवल भारतीय मूल के समुदाय को आहत करता है, बल्कि अमेरिका की नैतिक साख को भी चोट पहुँचाता है। इसी तरह, बराक ओबामा शासनकाल के विदेश मंत्री जॉन केरी और राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार रहे सुज़ैन राइस ने भी ट्रंप के भारत-विरोधी टैरिफ को एक 'रणनीतिक भूल' करार दिया। उनके मुताबिक, भारत को दंडित करने से रूस पर दबाव डालने के बजाय अमेरिका की अपनी इंडो-पैसिफ़िक रणनीति कमजोर पड़ रही है।

केवल डेमोक्रेट ही नहीं, बल्कि कई रिपब्लिकन थिंक-टैंक और नीति विशेषज्ञ भी मानते हैं कि भारत जैसे लोकतांत्रिक सहयोगी को नाराज़ करना चीन को अप्रत्यक्ष लाभ पहुँचाने जैसा है। सीनेट की विदेश संबंध समिति में गूंजे आलोचनात्मक स्वर यही संकेत दे रहे हैं कि भारत-अमेरिका संबंधों में आई दरार को अमेरिकी राजनीति के भीतर भी गंभीरता से महसूस किया जा रहा है।

दरअसल, जिस साझेदारी को ओबामा काल में 'डिफाइनिंग रिलेशनशिप ऑफ़ द 21st सेंचुरी' कहा गया था, वही अब ट्रंप की अल्पदृष्टि नीतियों की वजह से संकटग्रस्त हो गई है। यह असंतोष केवल कूटनीतिक हलकों तक सीमित नहीं, बल्कि अमेरिकी मीडिया, मानवाधिकार संगठनों और व्यवसायिक लॉबी तक फैला है। साफ है कि भारत के साथ रिश्तों में गिरावट ने ट्रंप को अपने ही देश में आलोचना के कटघरे में खड़ा कर दिया है।

सबसे बड़ा सवाल यह था कि अमेरिका ने भारत को तो निशाना बनाया, लेकिन रूस से सबसे ज्यादा तेल खरीदने वाले चीन को क्यों बख्श दिया? इसका जवाब अमेरिका और चीन के बीच जटिल आर्थिक निर्भरता में छिपा था। अमेरिका चीन के दुर्लभ खनिजों (rare earths) और उसकी विशाल आपूर्ति श्रृंखला पर इतना निर्भर है कि वह चीन के साथ एक पूर्ण व्यापार युद्ध का जोखिम नहीं उठा सकता, खासकर क्रिसमस सीजन से ठीक पहले। भारत के साथ उसकी ऐसी कोई मजबूरी नहीं थी। इस चयनात्मक कार्रवाई ने यह साफ कर दिया कि ट्रंप की नीति सिद्धांतों पर नहीं, बल्कि सुविधा पर आधारित थी।

इस टैरिफ युद्ध का असर तुरंत दिखने लगा। गुजरात के सूरत में, जहाँ दुनिया के 90% हीरे तराशे जाते हैं, उद्योग लगभग ठप हो गया। अमेरिका भारतीय हीरों का सबसे बड़ा खरीदार है। टैरिफ की वजह से ऑर्डर रुक गए, कारखाने बंद होने लगे और हजारों कारीगर बेरोजगार हो गए। अजय लाकुम जैसे हीरा कारीगर, जिनकी पूरी जिंदगी इसी काम में गुजरी थी, अचानक सड़क पर आ गए। यह सिर्फ एक आर्थिक आंकड़ा नहीं था; यह लाखों लोगों की रोजी-रोटी पर एक सीधा प्रहार था।

वहीं दूसरी ओर भारत पर 50 प्रतिशत तक के भारी-भरकम टैरिफ लगाने का फैसला केवल नई दिल्ली के लिए ही नहीं, बल्कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था के लिए भी गहरा झटका साबित हुआ। यह कदम ऐसे समय उठाया गया जब अमेरिकी उद्योग पहले ही महँगाई, सप्लाई-चेन संकट और चीन के साथ चल रहे व्यापार युद्ध की मार झेल रहा था। भारत से आने वाले उत्पादों पर अचानक इतनी बड़ी बाधा ने अमेरिकी आयातकों और रिटेल कंपनियों की लागत को कई गुना बढ़ा दिया। टेक्सटाइल से लेकर डायमंड प्रोसेसिंग, ऑटो पार्ट्स से लेकर फार्मास्यूटिकल्स तक, अनेक सेक्टरों में अमेरिकी उपभोक्ताओं को महंगे दाम चुकाने पड़े।

खासकर डायमंड और जेम्स-स्टोन इंडस्ट्री, जिसका केंद्र न्यूयॉर्क और लॉस एंजेलिस है, सीधे प्रभावित हुई। सूरत से आयात पर लगे टैरिफ ने कारोबारियों की कमर तोड़ दी, जिससे हज़ारों नौकरियाँ खतरे में आ गईं। दवा उद्योग, जो भारत

से सस्ती जेनेरिक दवाइयों पर निर्भर है, वहाँ भी कीमतें अचानक बढ़ने लगीं, जिससे आम अमेरिकी की जेब पर अतिरिक्त बोझ पड़ा। नतीजतन, उपभोक्ता महँगाई सूचकांक में उछाल दर्ज हुआ और खुद अमेरिकी फेडरल रिज़र्व के भीतर इस पर चिंता जताई गई।

व्यापार लॉबी और बिज़नेस काउंसिल ने व्हाइट हाउस को चेताया कि भारत पर कठोर टैरिफ लगाने से अमेरिकी कंपनियाँ प्रतिस्पर्धा खो रही हैं और बाजार में उनकी स्थिति कमजोर हो रही है। रिपब्लिकन पार्टी के भीतर भी असंतोष उभर आया, क्योंकि पारंपरिक रूप से कारोबारी हितों का समर्थन करने वाले समूह इसे 'स्व-घाती' कदम मान रहे थे। परिणाम यह हुआ कि टैरिफ से चीन पर दबाव बनाने के बजाय अमेरिका ने अपने ही घरेलू उद्योगों और उपभोक्ताओं को महँगाई और अस्थिरता की आग में झोंक दिया।

भू-राजनीति का डांवाडोल समीकरण

भारत-अमेरिका संबंधों में आया यह भूचाल सिर्फ द्विपक्षीय नहीं था। इसके झटके पूरी दुनिया की भू-राजनीति, कूटनीति और अर्थव्यवस्था में महसूस किए गए।

भू-राजनीतिक बदलाव: ट्रंप की कार्रवाइयों का सबसे बड़ा और विडंबनापूर्ण परिणाम यह हुआ कि इसने भारत को अनजाने में रूस और चीन के और करीब धकेल दिया। अमेरिका की इंडो-पैसिफिक रणनीति का मुख्य स्तंभ भारत को चीन के खिलाफ एक मजबूत संतुलनकारी शक्ति के रूप में खड़ा करना था। लेकिन भारत को इस तरह अलग-थलग और दंडित करके, ट्रंप ने ठीक इसका उलटा किया। उन्होंने भारत को रूस-भारत-चीन (आरआईसी) जैसे त्रिपक्षीय मंचों को अधिक गंभीरता से लेने के लिए मजबूर कर दिया। एक ऐसे समय में जब चीन से मुकाबला करने के लिए अमेरिका को भारत जैसे साझेदार की सबसे ज्यादा जरूरत थी, ट्रंप की नीतियों ने उसी साझेदार को अपने प्रतिद्वंद्वियों के खेमे की ओर धकेल दिया।

कूटनीतिक अविश्वास: इस पूरे प्रकरण ने दुनिया भर के अमेरिकी सहयोगियों को एक खतरनाक संदेश दिया। संदेश यह था कि अमेरिका के साथ 'रणनीतिक साझेदारी' का कोई मतलब नहीं है अगर आपका नेता राष्ट्रपति ट्रंप के घरेलू राजनीतिक एजेंडे या उनके क्षणिक गुस्से के रास्ते में आ जाए। इसने अमेरिका की विश्वसनीयता पर एक गहरा प्रश्नचिह्न लगा दिया। नियम-आधारित विश्व व्यवस्था, जिसकी अमेरिका दशकों से वकालत करता आया है, अब एक 'डील-आधारित अव्यवस्था' में बदलती दिख रही थी, जहाँ नियम वही थे जो डोनाल्ड ट्रंप तय करते थे।

आर्थिक अनिश्चितता: इस टैरिफ युद्ध ने वैश्विक अर्थव्यवस्था में अनिश्चितता की एक नई लहर पैदा कर दी। भारतीय रुपये और बॉन्ड बाजार पर दबाव बढ़ गया। वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाएं, जो पहले से ही महामारी और यूक्रेन युद्ध से जूझ रही थीं, और अधिक बाधित हो गईं। यह साबित हो गया कि जब दुनिया की दो सबसे

अब यह स्पष्ट हो गया है कि भारत को अमेरिकी निर्भरता कम करके अपनी विदेश नीति को और अधिक मजबूती से स्वतंत्र बनाना होगा, ताकि वह किसी एक खेमे का पिछलग्गू न बने और अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा कर सके। डोनाल्ड ट्रंप की 'अमेरिका फर्स्ट' और 'मेक अमेरिका ग्रेट अगेन' नीतियों ने भारत की रणनीतिक स्वायत्तता को कड़ी चुनौती दी है।

बड़ी अर्थव्यवस्थाएं और लोकतंत्र इस तरह टकराते हैं, तो इसका असर सिर्फ उन पर ही नहीं, बल्कि पूरी वैश्विक आर्थिक स्थिरता पर पड़ता है।

दोस्ती के मलबे पर भविष्य की तलाश

'हाउडी मोदी' के जयघोष से लेकर 50% टैरिफ की धमकी तक, भारत-अमेरिका संबंधों का यह सफर एक कड़वा सबक है। यह सबक है कि अंतरराष्ट्रीय संबंधों में व्यक्तिगत केमिस्ट्री और दोस्ती के नारों पर भरोसा नहीं किया जा सकता, खासकर जब आप डोनाल्ड ट्रंप जैसे नेता के साथ व्यवहार कर रहे हों। यह कहानी सिर्फ दो नेताओं के बीच के रिश्ते के टूटने की नहीं है, बल्कि यह उन गहरी संरचनात्मक बदलावों की कहानी है जो आज वैश्विक राजनीति को आकार दे रहे हैं।

आज भारत एक चौराहे पर खड़ा है। ट्रंप के दूसरे कार्यकाल ने यह स्पष्ट कर दिया है कि अमेरिका पर आँख बंद करके भरोसा नहीं किया जा सकता। आगे का रास्ता क्या है? क्या यह रिश्ता फिर से पटरी पर आ सकता है? शायद हाँ, लेकिन यह अब पहले जैसा कभी नहीं होगा। भारत को यह समझना होगा कि भविष्य की राह अपनी 'रणनीतिक स्वायत्तता' को और अधिक मजबूती से स्थापित करने में ही है। उसे अपने विकल्पों को खुला रखना होगा - पश्चिम के साथ साझेदारी भी करनी होगी, और रूस-चीन जैसे देशों के साथ संवाद भी बनाए रखना होगा।

पुराने नायक अब मंच से उतर चुके हैं, और नए किरदारों के साथ एक नया नाटक खेला जा रहा है। इस नाटक में भारत को अपनी पटकथा खुद लिखनी होगी। उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि वह किसी और की कहानी का एक सहायक पात्र बनकर न रह जाए। दोस्ती का वह ताजमहल, जो कभी इतना भव्य और मजबूत दिखता था, आज खंडहर में तब्दील हो चुका है। अब भारत को इस मलबे पर बैठकर मातम मनाने के बजाय, अपनी विदेश नीति की एक नई, आत्मनिर्भर और मजबूत इमारत खड़ी करनी होगी, जिसकी नींव किसी नेता के व्यक्तिगत संबंधों पर नहीं, बल्कि भारत के अपने अडिग राष्ट्रीय हितों पर टिकी हो। यही इस दौर का सबसे बड़ा सच है और यही भविष्य का एकमात्र रास्ता भी।

ट्रंप के टैरिफ से अहम साझेदारी हो रही प्रभावित?

अमेरिकी प्रशासन द्वारा भारतीय आयात पर भारी शुल्क लगाने के प्रस्ताव ने अमेरिका-भारत साझेदारी पर सवाल खड़े कर दिए हैं। हालांकि, इन दरों को एक तरह की मोलभाव की रणनीति भी माना जा रहा है...

केनेथ आई. जस्टर

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप जब अन्य देशों से जुड़ी समस्याओं को देखते हैं, तो वे उन्हें मुख्यतः द्विपक्षीय नजरिए से आंकते हैं, और खास चिंताओं के संदर्भ में ही। वे 'पारस्परिकता' की अवधारणा में गहरा विश्वास रखते हैं। उनके नजरिए से, अमेरिका-भारत के आर्थिक रिश्ते लंबे समय से असंतुलित हैं। वे भारत के ऊँचे व्यापार अवरोधों और अमेरिका के भारत के साथ बड़े व्यापार घाटे से चिंतित हैं।

इसी के चलते प्रशासन ने 25 प्रतिशत 'पारस्परिक' शुल्क लगाया है ताकि भारत पर दबाव बने और वह बाज़ार में और खुलापन लाए तथा एक व्यापार समझौते को मंजूरी दे।

व्हाइट हाउस ने 27 अगस्त से एक अतिरिक्त 25 प्रतिशत टैरिफ भी लगा दी। इस मामले में राष्ट्रपति की चिंता यह है कि भारत द्वारा आयात किए गए तेल के भुगतान से रूस को आर्थिक सहारा मिलता है, जो यूक्रेन के खिलाफ युद्ध और निर्दोष नागरिकों की मौत को आगे बढ़ाता है।

इस दूसरे टैरिफ का उद्देश्य अप्रत्यक्ष रूप से पुतिन पर दबाव डालना होगा कि वे युद्ध खत्म करने की किसी योजना पर सहमत हों। यह भी संभव है कि ट्रंप मोदी को प्रेरित करना चाहते हों कि वे सीधे पुतिन से अपील करें। हालांकि, ट्रंप-पुतिन बैठक के बाद ऐसी रिपोर्टें आई थीं कि वे इस अतिरिक्त टैरिफ को स्थगित भी कर सकते हैं, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। बेशक, यह स्थिति रूस-यूक्रेन वार्ता की

31 जुलाई को अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने भारतीय आयात पर 25 प्रतिशत 'पारस्परिक' टैरिफ की घोषणा की। इसका उद्देश्य नई दिल्ली पर दबाव बनाना था ताकि वह अमेरिकी सामानों के लिए व्यापारिक अवरोध कम करे। इसके बाद ट्रंप ने एक कार्यकारी आदेश पर हस्ताक्षर करते हुए भारत पर अतिरिक्त 25 प्रतिशत शुल्क लगाने की घोषणा की, जो 27 अगस्त से लागू हो गया। इसका कारण था भारत द्वारा रूसी तेल की निरंतर खरीद। यह अतिरिक्त 25 प्रतिशत टैरिफ, जो एक जुर्माना सरीखा है, किसी भी अमेरिकी व्यापारिक साझेदार पर लगाया गया सबसे ऊँचा टैरिफ होगा, और दशकों में पहली बार अमेरिका–भारत के बीच इतनी गंभीर व्यापारिक तनातनी दर्ज हुई है।

भारतीय सरकार ने इन टैरिफ का कड़ा विरोध किया है और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने हर कीमत पर अपने घरेलू उत्पादकों की रक्षा का संकल्प जताया है। इसके बावजूद, दोनों देशों ने संभावित समझौते के लिए कूटनीतिक संवाद जारी रखा हुआ है। इस जटिल स्थिति को समझने के लिए सीएफआर ने डिस्टिंग्विश्ड फेलो केनेथ आई. जस्टर से बातचीत की—जो ट्रंप प्रशासन के पहले कार्यकाल में भारत में राजदूत रह चुके हैं। चुकी यह मुद्दा आज सबसे ज्यादा मौजू है लिहाजा हम इसे पुनः प्रकाशित कर रहे हैं, जिससे वास्विक स्थिति की पड़ताल की जा सके।

प्रगति पर ट्रंप के आकलन के अनुसार बदल भी सकती है।

मोलभाव की रणनीति?

मेरे दृष्टिकोण से, भारत पर यह ऊँचे टैरिफ दरें एक मोलभाव की रणनीति हैं। यही तरीका ट्रंप ने जापान और यूरोपीय संघ के साथ समझौतों में अपनाया था। फिर भी, राष्ट्रपति की बयानबाज़ी और सार्वजनिक धमकियाँ, मोदी सरकार के लिए घरेलू स्तर पर किसी भी समझौते को स्वीकारना और कठिन बना सकती हैं।

मुझे नहीं लगता कि ट्रंप इन व्यापारिक मुद्दों को किसी व्यापक 'इंडो-पैसिफिक रणनीति' का हिस्सा मानते हैं, या यह अमेरिका और भारत के साझा रणनीतिक उद्देश्यों के खिलाफ है। इसलिए भारत सरकार के लिए यह मान लेना कि ये टैरिफ उनकी साझेदारी को मूल रूप से कमजोर करते हैं, अभी जल्दबाज़ी होगी।

राष्ट्रपति की भारत-अमेरिका साझेदारी में गहरी रुचि है और वे मोदी के साथ अपने अच्छे रिश्ते बनाये रखना चाहते हैं। लेकिन साथ ही वे टैरिफ को एक साधन मानते हैं जिससे आर्थिक संबंधों को संतुलित किया जा सके और, यदि अतिरिक्त टैरिफ लागू होता है, तो रूस-यूक्रेन युद्ध खत्म करने के लिए एक और सौदा संभव हो।

भारत की प्रतिक्रिया

भारत की प्रतिक्रिया कई परतों में बँटी हुई है।

शुरुआत में, जब भारत सरकार को लगा था कि व्यापार समझौते की घोषणा बस होने ही वाली है, तो यह अप्रत्याशित था कि और भी नए मुद्दे सामने आ गए।

लेकिन जब व्हाइट हाउस से भारत के टैरिफ को 'घृणित' और भारतीय अर्थव्यवस्था को 'मृत' कहा गया, तो भारतीय विशेषज्ञों और टिप्पणीकारों में आक्रोश फैल गया। इस पर ट्रंप के बार-बार दिए गए बयान ने और ईंधन डाला कि उन्होंने भारत और पाकिस्तान के बीच संघर्षविराम कराया है—जिसका भारत ने खुलेआम खंडन किया, और इससे ट्रंप और खिन्न हो गए।

हाल ही में, जब राष्ट्रपति ने 27 अगस्त से अतिरिक्त 25 प्रतिशत टैरिफ लगाई, तो भारत के विदेश मंत्रालय ने इसे 'अनुचित, अन्यायपूर्ण और अव्यवहारिक' करार दिया और कहा कि भारत 'अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए सभी आवश्यक कदम उठाएगा।' मोदी ने भी किसानों, डेयरी सेक्टर और मछुआरों की भलाई से समझौता न करने की प्रतिज्ञा ली और कहा कि वे व्यक्तिगत रूप से भी 'इसकी भारी कीमत चुकाने को तैयार हैं।'

दुर्भाग्यवश, अब भारत में सम्मानित आवाज़ें अमेरिका के साथ अपनी रणनीतिक साझेदारी के मूल्य पर सवाल उठाने लगी हैं।

अमेरिका: भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार

इसके बावजूद, अमेरिका भारत का सबसे बड़ा और सबसे महत्वपूर्ण व्यापारिक साझेदार है। भारत के कुल माल निर्यात का लगभग 20 प्रतिशत अमेरिका को जाता है।

हालाँकि यह 'पारस्परिक' टैरिफ कुछ प्रमुख क्षेत्रों—जैसे दवा उद्योग, इलेक्ट्रॉनिक्स और ऊर्जा—को छूट देता है, जो मिलकर भारत के कुल निर्यात का लगभग 40 प्रतिशत हैं, लेकिन फिर भी इसका नुकसान बड़ा होगा। खासकर वस्त्र, रत्न-आभूषण और ऑटो पार्ट्स जैसे क्षेत्रों पर गंभीर असर पड़ेगा।

क्या ट्रंप के टैरिफ भारत-अमेरिका रिश्तों को पटरी से उतार देंगे?

भारत की राजनीति में बहस जितनी जीवंत और शोरगुल वाली है, उतना ही ज़रूरी था कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी नए टैरिफ पर सार्वजनिक और सख़्त प्रतिक्रिया दें। लेकिन उतना ही महत्वपूर्ण यह भी है कि वे खुद को किसी बंद गली में न धकेलें और मौजूदा व्यापार विवाद सुलझाने के रास्तों पर बातचीत के लिए खुले रहें। मेरी समझ में दोनों नेता इस सितंबर के अंत में संयुक्त राष्ट्र महासभा के मौके पर अमेरिका में एक मुलाक़ात तय करने की कोशिश कर रहे हैं।

पिछले पच्चीस वर्षों में, जब दोनों देशों में अलग-अलग सरकारें और पार्टियाँ सत्ता में आईं, तब भी भारत-अमेरिका संबंधों की प्रगति उल्लेखनीय रही है। यहाँ तक कि ट्रंप के पहले कार्यकाल में भी, जब उन्होंने और मोदी ने एक गर्मजोशी भरा व्यक्तिगत रिश्ता बनाया। लेकिन यह भी सच है कि इस द्विपक्षीय संबंध का आर्थिक पहलू हमेशा अपनी वास्तविक क्षमता से पीछे ही रहा है।

अतीत में भी भारत और अमेरिका के बीच व्यापार विवाद रहे हैं, लेकिन यह विवाद कहीं अधिक तीखा है—हालाँकि अब भी हल किया जा सकता है। शुरुआती तीखी बयानबाज़ी के बावजूद, वाशिंगटन और नई दिल्ली संवाद के रास्ते खुले रखे हुए हैं और उम्मीद है कि दोनों रचनात्मक तरीक़े से किसी व्यापारिक समझौते की दिशा में बढ़ेंगे। आख़िरकार, सितंबर में होने वाली ट्रंप-मोदी मुलाक़ात शायद उन अटके हुए मुद्दों को सुलझाने और रिश्तों को पटरी पर लाने के लिए ज़रूरी साबित होगी।

भारत की अर्थव्यवस्था पर असर

यदि यह विवाद लंबा खिंचता है, तो इसका असर भारत की अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों पर ज़रूर पड़ेगा। मौजूदा टैरिफ़ भारत से अमेरिका जाने वाले 55 प्रतिशत से अधिक निर्यात को प्रभावित कर रहा है। उदाहरण के लिए, वस्त्र और परिधान क्षेत्र में भारत की प्रतिस्पर्धा वियतनाम और बांग्लादेश से है, जिन्हें अमेरिका में कहीं कम टैरिफ़ का सामना करना पड़ता है। अगर अमेरिकी कंपनियाँ अपनी आपूर्ति श्रृंखला भारत से हटाकर इन देशों की ओर मोड़ देती हैं, तो भारत को व्यापार और रोज़गार दोनों ही मोर्चों पर गंभीर नुकसान होगा। विशेषज्ञों के मुताबिक़, निर्यात व्यापार में गिरावट भारत की घरेलू विकास दर को लगभग 0.5 प्रतिशत या उससे अधिक तक नीचे ला सकती है—यह इस पर निर्भर करेगा कि ऊँचे टैरिफ़ कितने समय तक चलते हैं।

अमेरिका पर असर

टैरिफ़ का बोझ अमेरिकी कंपनियों और उपभोक्ताओं पर भी पड़ेगा। जिन अमेरिकी कंपनियों के उत्पादों में भारतीय पुर्ज़े या घटक इस्तेमाल

होते हैं, उनके उत्पादन ख़र्च बढ़ेंगे (या फिर उन्हें विकल्प ढूँढ़ने होंगे)। वहीं, अमेरिकी उपभोक्ताओं को भारतीय वस्त्र, रत्न-आभूषण, ऑटो पार्ट्स और कुछ खाद्य पदार्थों जैसे सामान महँगे दाम पर और सीमित विकल्पों के साथ मिलेंगे। दोनों देशों पर वास्तविक प्रभाव कई कारकों पर निर्भर करेगा—जैसे उत्पाद का भेद, माँग, गुणवत्ता और अनुबंध की शर्तें।

रणनीतिक असर और चीन का लाभ

आर्थिक नुकसान से परे, यदि कोई सौदा नहीं होता है, तो इसके दुष्प्रभाव भारत-अमेरिका संबंधों के अन्य क्षेत्रों पर भी पड़ सकते हैं—जैसे रक्षा और तकनीकी सहयोग। और अगर संबंध कमजोर होते हैं, तो इसका सीधा लाभ चीन को मिलेगा—जो न तो भारत और न ही अमेरिका के हित में है। वाशिंगटन और नई दिल्ली दोनों को समझना चाहिए कि उनकी द्विपक्षीय साझेदारी किसी भी उस व्यवस्था से कहीं अधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली है, जो वे चीन के साथ बना सकते हैं—जो दोनों के लिए एक रणनीतिक चुनौती बना हुआ है।

दो बड़े मुद्दे

भारत-अमेरिका के सामने अब दो अहम मुद्दे हैं:

1. 25 प्रतिशत पारस्परिक टैरिफ, जो व्यापारिक समझौते से जुड़ा है।

2. अतिरिक्त 25 प्रतिशत टैरिफ, जो रूस से भारत के तेल आयात से जुड़ा है।

रूसी तेल पर संभावित टैरिफ को लेकर भारत की शुरुआती स्थिति 'देखो और इंतज़ार करो' वाली लगती है। अगर रूस-यूक्रेन संघर्ष जल्दी खत्म होता है, तो तेल आयात पर यह टैरिफ अपने आप हट जाएगा, लेकिन निकट भविष्य में इसकी संभावना कम है। ऐसे में भारत शायद अपने रूसी तेल आयात को चुपचाप कुछ घटाकर अमेरिका से ऊर्जा आयात बढ़ा सकता है। रिपोर्टें कहती हैं कि यह प्रक्रिया पहले से शुरू हो चुकी है। अगर ऐसा है, तो नई दिल्ली वाशिंगटन से टैरिफ के अमल में देरी करने की गुज़ारिश कर सकती है। और अगर सितंबर की ट्रंप-मोदी मुलाक़ात में व्यापारिक विवाद सुलझ गया, तो संभव है कि अमेरिका इस अतिरिक्त 25 प्रतिशत टैरिफ को पूरी तरह हटा दे—भले ही रूस-यूक्रेन विवाद तब तक खत्म न हुआ हो। जहाँ तक 25 प्रतिशत पारस्परिक टैरिफ की बात है, मेरी नज़र में यह ट्रंप की 'मोलभाव रणनीति' है, न कि भारत-अमेरिका रणनीतिक साझेदारी को तोड़ने की इच्छा। ऐसी स्थिति में भारत को प्रतिशोध स्वरूप अमेरिकी आयात पर टैरिफ़ लगाने के प्रलोभन से बचना चाहिए—क्योंकि यह उल्टा असर करेगा। सौभाग्य से अब तक इसके संकेत नहीं हैं कि भारत ऐसा करने जा रहा है।

आगे का रास्ता

भारत को चाहिए कि वह यथासंभव रचनात्मकता के साथ नए विचार सामने रखे। उदाहरण के लिए, अन्य अमेरिकी व्यापारिक समझौतों की समीक्षा करके यह देखा जा सकता है कि कौन-से तत्व भारत-अमेरिका सौदे को और आकर्षक बना सकते हैं। इसमें शामिल हो सकते हैं—भारतीय कंपनियों के अमेरिका में और निवेश, कुछ कृषि उत्पादों (जैसे कपास और ब्लूबेरी) के लिए शुल्क-मुक्त प्रवेश, और कुछ अन्य वस्तुओं को सीमित कोटा के तहत मान्यता देना। ट्रंप के पहले कार्यकाल में दोनों देशों ने सीमित अमेरिकी डेयरी आयात का एक प्रस्ताव भी तैयार किया था—शायद इसे फिर से जीवित किया जा सके।

अपने अनुभव के आधार पर, मुझे लगता है कि मोदी एक बेहद कुशल वार्ताकार हैं और ट्रंप जैसे उच्च-जोखिम वाले नेता के साथ बातचीत करने में सक्षम हैं। प्रधानमंत्री संभवतः द्विपक्षीय रिश्ते के रणनीतिक महत्व पर बल देंगे और समय के साथ दोनों नेताओं के बीच बनी अच्छी समझ का उल्लेख करेंगे। वे यह भी दिखा सकते हैं कि वे व्यापार, ख़रीद और निवेश के मोर्चे पर कुछ और रियायतें देने को तैयार हैं, लेकिन साथ ही एक लोकतांत्रिक सरकार के प्रमुख होने के नाते उनकी कुछ सीमाएँ भी हैं, जिन पर अमेरिका की समझ और लचीलापन ज़रूरी है।अगर सब कुछ ठीक रहा, तो दोनों नेता एक समझौते पर पहुँच सकते हैं, जिसमें अंतिम पारस्परिक टैरिफ दर 15 प्रतिशत (लेकिन किसी भी हाल में 20 प्रतिशत से अधिक नहीं) तय हो। ऐसा समाधान न सिर्फ़ विवाद सुलझाएगा, बल्कि इस साल के अंत में ट्रंप की भारत यात्रा और क्वाड शिखर सम्मेलन का रास्ता भी आसान करेगा।

केनेथ आई. जस्टर, 2017 से 2021 तक भारत में अमेरिका के पच्चीसवें राजदूत रह चुके हैं।

ढाका की नई करवट

संतु दास

बांग्लादेश में जनरल वकार-उज़-जमान का धर्मनिरपेक्षता पर ज़ोर सिर्फ़ बयान नहीं, बल्कि एक गहरी चिंता का प्रकटीकरण था। शेख हसीना के शासन का अंत एक राजनीतिक शून्य छोड़ गया है, जहाँ कट्टरपंथी ताकतें और सेना फिर से राजनीति में खिंच रही हैं। यह उथल-पुथल भारत की पूर्वी सीमा पर स्थिरता के लिए गंभीर चुनौती है, जो पूरे क्षेत्र के भविष्य को परिभाषित करेगी।

17 अगस्त 2025 को जब बांग्लादेश के सेना प्रमुख जनरल वकार-उज़-ज़मान ने देश में धर्मनिरपेक्षता के महत्व और शांति बनाए रखने में सेना की भूमिका को दृढ़ता से दोहराया, तो यह केवल एक औपचारिक बयान नहीं था। यह एक गहरी चिंता का प्रकटीकरण था, एक ऐसे राष्ट्र की आत्मा में झांकने का प्रयास था जो एक बार फिर अपने अतीत के प्रेतों से जूझ रहा है। एक तरफ बिगड़ती कानून-व्यवस्था, अल्पसंख्यकों पर बढ़ते हमले और दूसरी तरफ फरवरी 2026 में होने वाले चुनावों की अनिश्चितता के बीच, बांग्लादेश एक खतरनाक चौराहे पर खड़ा है। सेना, जो पिछले 15 वर्षों की राजनीतिक स्थिरता में एक पेशेवर संस्थान बनने की राह पर थी, अब अनिच्छा से ही सही, एक बार फिर देश की राजनीति के दलदल में खिंचती जा रही है।

शेख हसीना के 15 साल के लंबे शासन का अंत, जिसने एक नाजुक लेकिन प्रभावी नागरिक-सैन्य संतुलन बनाया था,उसने एक ऐसा शून्य पैदा कर दिया है जिसे भरने के लिए कट्टरपंथी ताकतें और सेना के भीतर की पुरानी विचारधाराएं फिर से सिर उठा रही हैं। यह कहानी केवल बांग्लादेश के आंतरिक संकट की नहीं है। यह भारत के लिए भी एक गंभीर रणनीतिक चेतावनी है, क्योंकि उसकी पूर्वी सीमा पर एक स्थिर, धर्मनिरपेक्ष और मैत्रीपूर्ण पड़ोसी का भविष्य दांव पर लगा है। यह विश्लेषण बांग्लादेश के इस जटिल नागरिक-सैन्य समीकरण की ऐतिहासिक जड़ों, हसीना युग के विरोधाभासों और उनके पतन के बाद उत्पन्न हुए उस खतरनाक शून्य की पड़ताल करता है, जो न केवल ढाका के भविष्य, बल्कि पूरे क्षेत्र की स्थिरता को परिभाषित करेगा।

अतीत की परछाइयां

बांग्लादेश की त्रासदी यह है कि 1971 में अपनी मुक्ति के बावजूद, वह अपनी राजनीति से पाकिस्तानी सेना के हस्तक्षेप की संस्कृति को पूरी तरह से मिटा नहीं पाया। 1970 से 1990 के दशक तक का इतिहास रक्तरंजित सैन्य तख्तापलट, राजनीतिक हत्याओं और कमजोर लोकतांत्रिक संस्थाओं का एक भयावह अध्याय है। शेख मुजीबुर रहमान की हत्या (1975), ब्रिगेडियर खालिद मुशर्रफ का प्रतिकार और उनकी हत्या, जनरल जिया-उर-रहमान का सत्ता पर कब्जा और फिर उनकी हत्या, और अंत में जनरल एचएम इरशाद

का तख्तापलट—यह सब एक ही कहानी के अलग-अलग हिस्से हैं: एक ऐसी सेना जो विचारधाराओं में गहराई से विभाजित थी और जिसे राजनेताओं ने अपने हितों के लिए इस्तेमाल करने की कोशिश की, और अंततः उसी का शिकार हुए।

इस काल ने एक ऐसा स्थायी अविश्वास पैदा किया, जहाँ नागरिक नेतृत्व सेना को एक खतरे के रूप में देखता था और सेना नागरिक नेताओं को अक्षम और भ्रष्ट मानती थी। 1991 में संसदीय प्रणाली की बहाली और शेख हसीना एवं खालिदा जिया के बीच की प्रतिद्वंद्विता ने नागरिक नेतृत्व को मजबूत तो किया, लेकिन सेना के भीतर गुटबाजी को संस्थागत भी बना दिया, जहां दोनों दल अपने-अपने वफादार अधिकारियों को बढ़ावा देते थे।

हसीना का विरोधाभास

2009 में जब शेख हसीना सत्ता में लौटीं, तो उन्हें इस रक्तरंजित विरासत का पूरा ज्ञान था। उन्होंने सेना के साथ एक नया, अभूतपूर्व और विरोधाभासी संतुलन बनाया, जिसे एक 'सोने के पिंजरे' की उपमा दी जा सकती है। यह उनकी 15 साल की सत्ता का आधार था।

पिंजरे को 'सोना' बनाने के लिए, हसीना ने सेना को खुश करने की एक व्यापक नीति अपनाई। उन्होंने सेना के बजट में भारी विस्तार किया, उसे अत्याधुनिक उपकरणों से लैस किया, आकर्षक निर्माण अनुबंध दिए, और संयुक्त राष्ट्र के शांति अभियानों में उनकी भागीदारी को बढ़ाया, जो अधिकारियों के लिए प्रतिष्ठा और आय का एक बड़ा स्रोत है। उन्होंने सेना की अवैध तस्करी नेटवर्क और बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार पर भी आँखें मूंद लीं। यह एक स्पष्ट सौदा था- जब तक सेना राजनीति से दूर रहती है, उसे आर्थिक रूप से पुरस्कृत किया जाएगा।

लेकिन साथ ही, उन्होंने उस पिंजरे की सलाखें भी मजबूत कीं। 2009 की बांग्लादेश राइफल्स की बगावत इस रणनीति का एक महत्वपूर्ण मोड़ थी। इस बगावत में, जिसमें कट्टरपंथी जमात-ए-इस्लामी और हिज्ब-उत-तहरीर जैसे संगठनों की मिलीभगत के आरोप लगे, हसीना ने सेना को सीधे हस्तक्षेप करने की अनुमति देने के बजाय एक राजनीतिक समाधान चुना। उन्होंने गृह मंत्रालय के अधीन बलों का उपयोग किया, जिससे सेना के भीतर गहरे विभाजन और रक्तपात को रोका जा सका। इस संकट में भारत के मजबूत समर्थन ने भी सेना के सामने उनके हाथ मजबूत किए।

इसके बाद, हसीना ने व्यवस्थित रूप से सेना को शक्तिहीन किया। 2011 में, उन्होंने 15वें संवैधानिक संशोधन के माध्यम से 'कार्यवाहक सरकार' के प्रावधान को समाप्त कर दिया—यह वही प्रावधान था जिसका उपयोग सेना ने 2007 में सत्ता पर कब्जा करने के लिए किया था। 2013 में, उन्होंने बांग्लादेश राइफल्स के विद्रोह में शामिल सैकड़ों सैनिकों और अधिकारियों को मौत और आजीवन कारावास की सजा सुनाई, जो सेना के लिए एक कड़ा संदेश था। उन्होंने सेना के भीतर अपने वफादारों को 'नोट शीट प्रमोशन' के माध्यम से शीर्ष पदों पर पहुँचाया, जिसमें कथित

तौर पर उनके रिश्तेदार जनरल ज़मान की सेना प्रमुख के रूप में नियुक्ति भी शामिल थी। साथ ही, उन्होंने रैपिड एक्शन बटालियन जैसी नागरिक एजेंसियों का उपयोग विपक्ष और असंतोष को कुचलने के लिए किया, जिससे घरेलू राजनीति में सेना की भूमिका लगभग समाप्त हो गई।

भारत के दृष्टिकोण से, यह 'सोने का पिंजरा' मॉडल एक रणनीतिक वरदान था। हसीना के शासन ने न केवल बांग्लादेश में आर्थिक स्थिरता लाई, बल्कि उन्होंने भारत विरोधी उग्रवादी समूहों पर भी नकेल कसी और एक धर्मनिरपेक्ष एजेंडे को बढ़ावा दिया, जो नई दिल्ली के सुरक्षा हितों के लिए महत्वपूर्ण था।

पिंजरे का टूटना और अनिश्चितता का दौर

तो फिर यह संतुलन टूटा क्यों? 2024 के राष्ट्रव्यापी छात्र विरोध प्रदर्शनों ने इस नाजुक समीकरण को तोड़ दिया। शुरुआत में, सेना ने सरकार का समर्थन करते हुए प्रदर्शनकारियों पर नकेल कसी। लेकिन जैसे-जैसे आंदोलन की लोकप्रियता बढ़ी और देशव्यापी हो गई, सेना ने एक महत्वपूर्ण गणना की। हसीना का और अधिक समर्थन करने का मतलब होता व्यापक रक्तपात, जो न केवल उनकी पेशेवर छवि को धूमिल करता, बल्कि उन्हें सीधे घरेलू राजनीति के उस दलदल में घसीट

लेता जिससे वे 15 सालों से बचे हुए थे। यह सेना के भीतर गहरे विभाजन को भी जन्म दे सकता था।

इसलिए, सेना ने आत्म-संरक्षण का रास्ता चुना। उन्होंने हसीना को पद छोड़ने के लिए मनाकर और एक अंतरिम सरकार का समर्थन करके सीधे हस्तक्षेप से परहेज किया। यह एक तख्तापलट नहीं था, बल्कि एक नियंत्रित संक्रमण सुनिश्चित करने का प्रयास था ताकि देश अराजकता में न डूबे।

लेकिन इस कदम ने अनजाने में एक 'पैंडोरा बॉक्स' खोल दिया है। हसीना के जाने से बना शून्य अब खतरनाक तरीके से भर रहा है। अंतरिम सरकार ने नागरिक-सैन्य समीकरण को दो तरह से बदल दिया है। पहला, सेना के भीतर विभाजन फिर से बढ़ रहा है। कट्टरपंथी इस्लामी झुकाव वाले अधिकारियों को कथित तौर पर उच्च पदों पर पदोन्नत किया जा रहा है। 2009 के विद्रोह के लगभग 300 दोषियों को रिहा कर दिया गया है। जनरल ज़मान ने हसीना शासन के तहत हुए अत्याचारों की जांच की घोषणा की है, जो सेना के भीतर वफादारों के शुद्धीकरण का संकेत हो सकता है। पाकिस्तान के साथ बढ़ते सुरक्षा सहयोग से सेना में इस्लामवादी और भारत-विरोधी तत्वों को और बल मिलने की संभावना है।

दूसरा, सेना अब अनिच्छा से कानून-व्यवस्था बनाए रखने और घरेलू राजनीति में शामिल हो गई है, जिससे स्पष्ट हताशा पैदा हो रही है। जनरल ज़मान का यह कहना कि 'सेना राष्ट्र की रक्षा के लिए है, पुलिसिंग के लिए नहीं,' इसी हताशा को दर्शाता है। इस बीच, इस्लामवादी ताकतें मजबूत हुई हैं, अल्पसंख्यकों पर हमले बढ़े हैं, और नागरिक नेतृत्व का संकट गहरा गया है। शेख हसीना और अवामी लीग के राजनीतिक परिदृश्य से बाहर होने, और बीएनपी की अध्यक्ष खालिदा जिया के खराब स्वास्थ्य के साथ, देश में एक खतरनाक राजनीतिक शून्य है।

दिल्ली की दुविधा

भारत के लिए, यह स्थिति एक रणनीतिक दुःस्वप्न के सच होने जैसी है। 15 वर्षों का कालखंड और स्थिरता अब अनिश्चितता और अस्थिरता में बदल गई है। नई दिल्ली के सामने कई गंभीर चिंताएँ हैं:

कट्टरपंथ का उदय: एक कमजोर और अस्थिर बांग्लादेश कट्टरपंथी इस्लामी समूहों के लिए एक उपजाऊ जमीन प्रदान करता है, जिनका सीधा असर भारत की आंतरिक सुरक्षा पर पड़ सकता है, विशेष रूप से पश्चिम बंगाल और पूर्वोत्तर राज्यों में।

चीन और पाकिस्तान का प्रभाव: राजनीतिक शून्य चीन और पाकिस्तान को बांग्लादेश में अपना प्रभाव बढ़ाने का एक सुनहरा अवसर प्रदान करता है, जिससे इस क्षेत्र में भारत का रणनीतिक लाभ कम हो सकता है।

आर्थिक और कनेक्टिविटी परियोजनाएं: भारत ने बांग्लादेश के साथ कनेक्टिविटी और व्यापार में भारी निवेश किया है। राजनीतिक अस्थिरता इन सभी परियोजनाओं को खतरे में डाल सकती है।

अल्पसंख्यकों की सुरक्षा: बांग्लादेश में हिंदू और अन्य अल्पसंख्यकों पर किसी भी हमले का भारत में राजनीतिक और सामाजिक प्रभाव पड़ता है।

आने वाले चुनाव इस संकट का समाधान नहीं, बल्कि इसके अगले अध्याय की शुरुआत हो सकते हैं। एक कमजोर नागरिक सरकार, चाहे वह किसी भी दल की हो, सेना पर अपनी निर्भरता बढ़ाएगी, जिससे सेना का प्रभाव और बढ़ेगा। यदि चुनाव हिंसक होते हैं या परिणाम विवादित होते हैं, तो सेना के सीधे हस्तक्षेप का खतरा और भी बढ़ जाएगा।

निष्कर्ष यह है कि बांग्लादेश में हसीना युग का अंत एक युग का अंत है। वह 'सोने का पिंजरा' जो उन्होंने बनाया था, टूट चुका है, और अब 1975 के भूत एक बार फिर बैरकों से बाहर झाँक रहे हैं। भारत के लिए, यह केवल एक पड़ोसी देश का संकट नहीं है। यह उसकी 'नेबरहुड फर्स्ट' नीति की सबसे बड़ी परीक्षा है। नई दिल्ली को एक बहुत ही नाजुक संतुलन बनाना होगा—बिना हस्तक्षेप किए स्थिरता का समर्थन करना, और इस बात के लिए तैयार रहना कि उसकी पूर्वी सीमा पर एक बार फिर अनिश्चितता और अस्थिरता का लंबा दौर शुरू हो सकता है।

टैरिफ का प्रहार

क्या होगा भारतीय फार्मा का भविष्य?

लक्ष्मी रामकृष्णन

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने संकेत दिया है कि अगले 18 महीनों में भारतीय दवाओं पर 250% तक विशेष टैरिफ लगाया जा सकता है। यह कदम न सिर्फ दवाओं की कीमतें बढ़ाएगा, बल्कि वैश्विक स्वास्थ्य सुरक्षा और भारत–अमेरिका व्यापार संतुलन को गहराई से प्रभावित करेगा।

अभी भारतीय दवा कंपनियाँ अमेरिका द्वारा लगाए गए टैरिफ से मुक्त हैं, लेकिन यह सुरक्षा अधिक समय तक टिकने वाली नहीं है। भारत से आयात पर वर्तमान में 25% शुल्क है, जिसे अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने इस माह अतिरिक्त कर लगाने की घोषणा कर 50% तक बढ़ाने की बात कही है। कारण बताया गया है भारत का रूसी तेल का आयात। अभी तक दवा क्षेत्र को अमेरिकी टैरिफ के दायरे से बाहर रखा गया है, लेकिन हालिया साक्षात्कार में ट्रंप ने संकेत दिया कि अगले 18 महीनों में वे दवा-विशेष टैरिफ लगा सकते हैं, जो 250% तक पहुँच सकते हैं। अनुमान है कि 25% फार्मा टैरिफ ही अमेरिकी दवा लागत में हर साल 51 अरब डॉलर जोड़ देगा, जिससे दवाओं की कीमतों में लगभग 13% की वृद्धि हो सकती है।

टैरिफ तनाव और सेक्शन 232 समीक्षा

अमेरिका-भारत द्विपक्षीय व्यापार संबंधों में पहले ही तनाव है। ट्रंप प्रशासन ने घोषणा की है कि भारत द्वारा रूसी कच्चे तेल की खरीद के बदले भारत से आयात पर अतिरिक्त टैरिफ लगाए जाएँगे, जिससे कुल शुल्क 50% तक पहुँच जाएगा। अब तक फार्मास्यूटिकल्स इस दायरे से बाहर रहे हैं, जबकि भारत अमेरिकी दवा उत्पादों पर 5–10% शुल्क लगाता है। अप्रैल 2025 में अमेरिका ने ट्रेड एक्सपैंशन एक्ट, 1962 के तहत अपने दवा आयात की सेक्शन 232 समीक्षा शुरू की है। मार्च 2026 तक इसके नतीजे आएँगे और तभी तय होगा कि राष्ट्रपति उन

आयातों पर शुल्क लगाएँगे या नहीं, जिन्हें राष्ट्रीय सुरक्षा जोखिम माना जाएगा। पहले इसी कानून के तहत स्टील और एल्युमिनियम पर लगाए गए टैरिफ ने अमेरिकी उत्पादकता और साझेदारों के साथ व्यापारिक संबंधों पर नकारात्मक असर डाला था। भारत इस मुद्दे को विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) में उठाएगा और दलील देगा कि स्टील और एल्युमिनियम पर नए टैरिफ डब्ल्यूटीओ के नियमों के अनुरूप नहीं हैं, साथ ही प्रतिशोधात्मक टैरिफ कदम उठाने का अधिकार भी सुरक्षित रखेगा।

अमेरिकी फार्मा टैरिफ: वर्तमान स्थिति

हाल ही में अमेरिका ने यूरोपीय संघ और जापान से आने वाले दवा आयात पर 15% और ब्रिटेन से आने वाली दवाओं पर 10% टैरिफ लगाया है। यह लंबे समय से चली आ रही उस परंपरा से बड़ा विचलन है, जिसमें स्वास्थ्य महत्व के कारण दवाओं को व्यापार विवादों से अलग रखा जाता था। इन टैरिफ का भविष्य फिलहाल अनिश्चित है और यह सेक्शन 232 समीक्षा के परिणाम पर निर्भर करेगा। ट्रंप ने संकेत दिया है कि किसी भी नए टैरिफ को अगले 18 महीनों में धीरे-धीरे लागू किया जाएगा ताकि अमेरिकी दवा आपूर्ति श्रृंखला सुरक्षित हो सके और उत्पादन को अमेरिकी ज़मीन पर वापस लाया जा सके।

हालाँकि, इस योजना का आधार यह है कि टैरिफ से आयातित दवाएँ महँगी हो जाएँगी, उपभोक्ता घरेलू विकल्पों की ओर रुख करेंगे और अमेरिकी दवा निर्माण व रोज़गार को बढ़ावा मिलेगा। लेकिन ये मान्यताएँ अमेरिकी स्वास्थ्य-तंत्र की जटिलताओं को नज़रअंदाज़ करती हैं और घरेलू उत्पादन (ऑनशोरिंग) के आर्थिक व परिचालन पहलुओं की अनदेखी करती हैं। उदाहरण के लिए, अमेरिका के 90% स्वास्थ्य ख़र्च का संबंध क्रॉनिक बीमारियों से है, जिनका प्रबंधन मुख्य रूप से प्रिस्क्रिप्शन दवाओं—ब्रांडेड और जेनेरिक दोनों—से होता है। अमेरिका दुनिया का सबसे बड़ा फार्मा बाज़ार है, जिसने 2024 में 212.67 अरब डॉलर मूल्य की दवाएँ आयात कीं। अमेरिका में 90% प्रिस्क्रिप्शन जेनेरिक दवाओं के लिए होते हैं, लेकिन ये कुल खर्च का केवल 20% ही बनाते हैं, जिसका मतलब है कि दवा पर होने वाला बड़ा हिस्सा पेटेंट-प्रोटेक्टेड दवाओं पर खर्च होता है।

भारतीय जेनेरिक पर निर्भरता

अमेरिकी स्वास्थ्य-तंत्र भारत पर भारी रूप से निर्भर है। अमेरिका की 47% जेनेरिक दवाएँ भारत से आती हैं और ये दवाएँ किफ़ायती दरों पर जीवन-रक्षक इलाज सुनिश्चित करती हैं। भारतीय जेनेरिक रोसुवास्टेटिन इसका उदाहरण है—इसके बाज़ार में आने के बाद 2016 से 2022 के बीच अमेरिका में इस दवा का खर्च उठा पाने वाले लोगों की संख्या लगभग दोगुनी हो गई। लेकिन यदि जेनेरिक पर टैरिफ 10–15% से ऊपर लगाया गया तो भारतीय कंपनियाँ बेहद पतले मुनाफ़े (रेज़र-थिन मार्जिन्स) के कारण अमेरिकी बाज़ार से बाहर निकल सकती हैं, या लागत घटाने के लिए ऐसे कदम उठा सकती हैं जो दवा की गुणवत्ता से समझौता करेंगे। इस स्थिति में दवा की कमी और लागत बढ़ने से अमेरिकी सार्वजनिक स्वास्थ्य सुरक्षा पर सीधा ख़तरा होगा।

आपूर्ति श्रृंखला की कमजोरियाँ

फार्मा आपूर्ति श्रृंखलाएँ बेहद जटिल हैं और इनकी सबसे बड़ी कमजोरी चीन पर निर्भरता है। की स्टार्टिंग मैटेरियल्स (केएसएम) और एक्टिव फार्मास्यूटिकल इंग्रीडिएंट्स (एपीआई) जैसी अहम सामग्रियों के लिए दुनिया का 40% हिस्सा चीन से आता है। कोविड-19 महामारी ने भारत की कमज़ोरियों को उजागर किया, जिसके चलते प्रोडक्शन-लिंक्ड इंसेंटिव (पीएलआई) स्कीम शुरू की गई ताकि केएसएम और एपीआई का घरेलू उत्पादन बढ़े। इसके बावजूद भारत अभी भी अपनी 70% एपीआई ज़रूरतें चीन से पूरी करता है।

यदि भारतीय दवा उत्पादों पर टैरिफ लगाया गया, तो भारतीय निर्माता एपीआई उत्पादन से हतोत्साहित हो जाएँगे। इसके बजाय, नुकसान कम करने और टैरिफ से बची लागत बनाए रखने के लिए वे सस्ते चीनी एपीआई की ख़रीद बढ़ाएँगे। कम से कम अंतरिम अवधि में तो यही होगा। इस तरह भारत और अमेरिका दोनों की कोशिशें, जो दवा आपूर्ति श्रृंखलाओं को चीन से अलग करने के लिए की जा रही हैं, कमज़ोर पड़ जाएँगी। इससे भारत और अमेरिका दोनों की स्वास्थ्य सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है, क्योंकि चीन पर निर्भरता और गहरी होगी। अमेरिकी स्वास्थ्य प्रणाली का दूसरा पहलू यह है कि अमेरिका में दवा निर्माण बढ़ाना जटिल प्रक्रिया

अमेरिकी टैरिफ का खतरा भारतीय दवाओं पर मंडरा रहा है, जो 250% तक बढ़ सकता है। यह केवल दवाओं को महंगा ही नहीं करेगा, बल्कि अमेरिकी स्वास्थ्य-तंत्र को भी अस्थिर कर देगा, क्योंकि अमेरिका की आधी जेनेरिक दवाएँ भारत से आती हैं। इससे गुणवत्ता से समझौता और चीन पर निर्भरता बढ़ सकती है

है और अनुमान है कि इसे पूरी तरह विकसित करने में कम से कम 5–10 साल लगेंगे। टैरिफ उच्च-लाभ वाली ब्रांडेड दवाओं के निर्माताओं को अमेरिका में उत्पादन लाने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है, चाहे वे मौजूदा इन्फ्रास्ट्रक्चर ख़रीदें या नई उत्पादन इकाइयाँ बनाएँ। लेकिन इसके लिए बड़े पैमाने पर निवेश, समय और अतिरिक्त चुनौतियाँ होंगी—

i) स्टील और एल्युमिनियम पर अमेरिकी टैरिफ, जो निर्माण लागत बढ़ाएँगे,

ii) अमेरिकी कठोर नियामक नियम, और

iii) उच्च-स्तरीय कुशल कार्यबल की ज़रूरत।

एमएफएन दवा मूल्य निर्धारण और नवाचार जोखिम

फार्मा आयातों को और जटिल बना रही है ट्रंप प्रशासन की नई दवा मूल्य नीति। मई 2025 में एक एक्जीक्यूटिव ऑर्डर के तहत यह नीति लाई गई—'मोस्ट-फेवर्ड नेशन (एमएफएन) प्रिस्क्रिप्शन ड्रग प्राइसिंग टू अमेरिकन पेशेंट्स।' इसके तहत कुछ नवोन्मेषी दवाओं की कीमतों को उन विकसित देशों में दी जाने वाली न्यूनतम कीमत से जोड़ा जाएगा, जिनकी प्रति व्यक्ति जीडीपी अमेरिका की 60% या उससे अधिक है।

ट्रंप ने 17 फार्मा कंपनियों को पत्र लिखकर निर्देश दिए हैं कि वे अमेरिकी रोगियों के लिए एमएफएन नीति के तहत दवाओं की कीमत घटाएँ, और उन्हें 60 दिन का समय दिया गया है।

मूल्य नियंत्रण और नवाचार पर असर

हालाँकि दवा मूल्य नियंत्रण रणनीतियाँ अल्पकालिक लाभ दे सकती हैं, लेकिन इससे कंपनियों का मुनाफ़ा घटेगा और अनुसंधान एवं विकास (आरएंडडी) में निवेश बुरी तरह प्रभावित होगा। इससे फार्मास्यूटिकल क्षेत्र में नवाचार धीमा पड़ जाएगा और कंपनियाँ अमेरिका-आधारित उत्पादन में निवेश करने से हतोत्साहित होंगी। यह स्थिति बेहद अनुचित होगी क्योंकि इससे अमेरिका और अन्य देशों की निर्भरता चीन पर बढ़ सकती है—जो धीरे-धीरे नवाचार के क्षेत्र में अंतर को पाट रहा है। परिणामस्वरूप नई दवाओं और अत्याधुनिक उपचारों तक पहुँच सीमित हो सकती है और वैश्विक स्वास्थ्य सुरक्षा पर गंभीर असर पड़ेगा। यह नीति अमेरिकी रोगियों के लिए दवाओं की कीमत घटाने और उन्हें अन्य तुलनात्मक रूप से विकसित देशों की कीमतों के बराबर लाने के उद्देश्य से है, लेकिन इसके चलते नवाचार बुरी तरह बाधित हो सकता है और वैश्विक स्वास्थ्य सुरक्षा कमजोर हो सकती है। ट्रंप के पहले राष्ट्रपति कार्यकाल में भी दवा मूल्य नियंत्रण नीतियाँ लागू करने का प्रयास हुआ था, लेकिन उन्हें कानूनी चुनौतियों और हितधारकों के विरोध का सामना करना पड़ा।

उद्योग की प्रतिक्रिया

फार्मा टैरिफ और एमएफएन (मोस्ट-फेवर्ड नेशन) की आशंका ने फार्मास्यूटिकल उद्योग में अनिश्चितता पैदा कर दी है। यहाँ तक कि

अमेरिकी अस्पतालों और फार्मेसियों ने कुछ दवाओं का स्टॉकपाइल (भंडारण) शुरू कर दिया है। उद्योग जगत की प्रतिक्रिया मिश्रित रही है—कुछ कंपनियाँ इस संभावना से असमंजस में हैं कि टैरिफ भविष्य में पुनः बातचीत से बदल सकते हैं, इसलिए वे अभी तय नहीं कर पा रहीं कि उत्पादन इकाइयाँ अमेरिका में स्थानांतरित करें या नहीं। वहीं, कई बड़े खिलाड़ी अमेरिकी विनिर्माण क्षमता बढ़ाने में भारी निवेश कर रहे हैं।

अमेरिकी दिग्गज कंपनियाँ—एलि लिली, जॉनसन एंड जॉनसन, एबवी, ब्रिस्टल मायर्स स्क्विब, गिलियड और रेजेनरॉन—के साथ स्विट्ज़रलैंड की रोश और नोवार्टिस, जापान की ताकेदा, फ्रांस की सनोफी और ब्रिटेन की एस्ट्राजेनेका ने अगले पाँच वर्षों में लगभग 320 अरब डॉलर निवेश करने का वादा किया है ताकि अमेरिका में अपनी औद्योगिक और उत्पादन क्षमता को मजबूत व विस्तारित किया जा सके।

भारतीय दवा निर्माता भी टैरिफ जोखिम से बचने के लिए अमेरिका में अपने उत्पादन केंद्र बढ़ा रहे हैं। ज़ाइडस लाइफसाइंसेज ने अमेरिकी बायोटेक कंपनी एजीनस इंक. की विनिर्माण इकाइयों को खरीदने का फैसला किया है, जो कैंसर-रोधी इम्यून थैरेपी बनाने में विशेषज्ञ है। इसके साथ ही यह कंपनी वैश्विक बायोलॉजिक्स सीडीएमओ (कॉन्ट्रैक्ट डेवलपमेंट एंड मैन्युफैक्चरिंग ऑर्गनाइजेशन) क्षेत्र में प्रवेश कर रही है। सिंगीन इंटरनेशनल लिमिटेड ने अमेरिका में अपनी पहली बायोलॉजिक्स उत्पादन साइट खरीदी है, जो मोनोक्लोनल एंटीबॉडी निर्माण पर केंद्रित है। वहीं, सन फार्मा ने इस वर्ष चेकपॉइंट थेराप्यूटिक का अधिग्रहण किया, जिसे उद्योग विशेषज्ञ एक रणनीतिक कदम मानते हैं। इस अधिग्रहण से सन फार्मा को अनलॉक्साइट नामक दवा मिली—जो उन्नत क्यूटेनियस स्क्वैमस सेल कार्सिनोमा (सीएसएससी) के लिए एफडीए द्वारा अनुमोदित पहली थैरेपी है। इससे कंपनी की इम्यूनो-ऑन्कोलॉजी (विशेषकर त्वचा कैंसर) में स्थिति मजबूत हुई है। ये प्रयास न केवल बाज़ार तक पहुँच बढ़ाते हैं बल्कि पोर्टफोलियो और उत्पादन स्थलों में विविधता लाकर स्वास्थ्य सुरक्षा को मजबूत करते हैं और भारत की दवा अनुसंधान एवं विकास क्षमता बढ़ाने की दिशा में अनुकूल माहौल बनाते हैं।

आगे का रास्ता

फार्मास्यूटिकल उद्योग के लिए टैरिफ के विकल्प तलाशना बेहद ज़रूरी है। अमेरिकी बाज़ार पर अत्यधिक निर्भरता घटाने के लिए यूरोपीय फार्मा प्रमुख (नोवार्टिस और सनोफी) ने यूरोप से अपील की है कि वे दवा की कीमतें बढ़ाएँ ताकि नवाचार को बढ़ावा मिले और अमेरिकी टैरिफ दबाव का संतुलन साधा जा सके। टैक्स इंसेंटिव या सब्सिडी अमेरिकी विनिर्माण को प्रोत्साहित कर सकते हैं और इन्हें दवा मूल्य निर्धारण व आपूर्ति श्रृंखला में अधिक पारदर्शिता लाने के औज़ार के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि भारतीय जेनेरिक समेत फार्मा पर टैरिफ लगाया गया, तो इससे अमेरिकी दवा की कीमतें बढ़ेंगी, दवा की कमी होगी और चीनी एपीआई पर निर्भरता और गहरी जाएगी। इसके बजाय, वार्ताओं का केंद्र भारत से विनिर्माण प्रतिबद्धताएँ हासिल करने पर होना चाहिए—बिना लागत बढ़ाए। इसके साथ ही उच्च-लाभ वाली दवाओं के लिए अमेरिकी विनिर्माण साइट्स में विस्तार की संभावना भी तलाशनी चाहिए।

ट्रंप की टैरिफ नीति अमेरिकी दवा आपूर्ति श्रृंखला को चीन पर और अधिक निर्भर बना सकता है, जिससे वैश्विक स्वास्थ्य सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी।

निष्कर्ष

अमेरिका–भारत फार्मास्यूटिकल व्यापार वैश्विक स्वास्थ्य सुरक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। अमेरिका द्वारा दवा-विशेष टैरिफ लगाने से न केवल अमेरिकी रोगियों की सस्ती दवाओं तक पहुँच प्रभावित होगी, बल्कि वैश्विक दवा आपूर्ति श्रृंखलाओं में भी हलचल मच जाएगी। भारतीय जेनेरिक दवा निर्माता बेहद कम मुनाफ़े (रेज़र-थिन मार्जिन्स) पर काम करते हैं और वे अमेरिका की लगभग आधी जेनेरिक दवाएँ उपलब्ध कराते हैं। यदि टैरिफ 10–15% से ऊपर गया तो उनके मुनाफ़े पर गंभीर चोट पहुँचेगी। सबसे अहम बात यह है कि टैरिफ अमेरिकी बायोफार्मा अनुसंधान और नवाचार पर नकारात्मक असर डालेगा और संभव है कि इसका नेतृत्व धीरे-धीरे चीन के हाथों चला जाए। रणनीतिक निवेश और एपीआई विविधीकरण ही अमेरिका और भारत दोनों को यह संतुलन साधने में मदद कर सकते हैं कि आर्थिक व स्वास्थ्य सुरक्षा बनी रहे और आवश्यक दवाओं तक पहुँच भी प्रभावित न हो।

लक्ष्मी रामकृष्णन ओआरएफ के सेंटर फॉर न्यू इकोनामिक डिप्लोमेसी में एसोसिएट फ़ेलो हैं।

भारत@2047
रणनीति का दुर्ग
शक्ति, सुरक्षा और आत्मविश्वास

संजय श्रीवास्तव

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने संकेत दिया है कि अगले 18 महीनों में भारतीय दवाओं पर 250% तक विशेष टैरिफ लगाया जा सकता है। यह कदम न सिर्फ दवाओं की कीमतें बढ़ाएगा, बल्कि वैश्विक स्वास्थ्य सुरक्षा और भारत–अमेरिका व्यापार संतुलन को गहराई से प्रभावित करेगा।

21वीं सदी का तीसरा दशक एक ऐसे भू-राजनीतिक भूचाल से परिभाषित हो रहा है, जहाँ दशकों पुराने वैश्विक व्यापार के नियम टूट रहे हैं और आर्थिक प्राथमिकताएँ रणनीतिक अनिवार्यताओं के अधीन होती जा रही हैं। राष्ट्रपति ट्रंप द्वारा भारत सहित दुनिया भर से होने वाले आयातों पर लगाए गए दंडात्मक टैरिफ, रूस-यूक्रेन संघर्ष के बाद बदलती ऊर्जा आपूर्ति श्रृंखला, और अमेरिका-रूस के बीच पनपते अप्रत्याशित संबंध—ये सभी घटनाएँ एक ऐसे वैश्विक तूफान का निर्माण कर रही हैं, जिसमें हर देश अपनी नाव बचाने की जुगत में लगा है। इस उथल-पुथल के बीच, भारत एक दर्शक मात्र नहीं है; वह एक सचेत और महत्वाकांक्षी रणनीति के साथ अपनी दिशा स्वयं तय कर रहा है।

यह रणनीति पारंपरिक निर्यात-आधारित विकास मॉडल से एक निर्णायक प्रस्थान है। यह एक 'दुर्ग' रणनीति है—एक ऐसी नीति जो बाहरी झटकों से बचाव के लिए पहले अपनी आंतरिक नींव को अभेद्य बनाती है, ताकि वह इस मजबूत आधार से दुनिया के साथ अपनी शर्तों पर जुड़ सके। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का 'दाम कम, दम ज़्यादा' का नारा केवल एक आर्थिक सूत्र नहीं, बल्कि इस नई राष्ट्रीय मानसिकता का प्रतीक है: एक ऐसा भारत जो केवल कम लागत पर उत्पादन नहीं करेगा, बल्कि गुणवत्ता, नवाovar और आत्मनिर्भरता के 'दम' पर वैश्विक मंच पर अपनी जगह बनाएगा। यह विश्लेषण भारत की इसी बहु-आयामी दुर्ग रणनीति की पड़ताल करता है, जो 'आत्मनिर्भर भारत' के दर्शन को 'विकसित भारत 2047' के लक्ष्य के साथ जोड़ती है, और यह समझने का प्रयास करता है कि क्या यह रणनीति भारत को इस अनिश्चित युग में एक अग्रणी शक्ति के रूप में स्थापित कर सकती है।

वैश्विक शतरंज की बिसात पर भारत

भारत की इस रणनीतिक धुरी को समझने के लिए उन बाहरी दबावों को समझना आवश्यक है, जो इसे आकार दे रहे हैं। ट्रंप के 'लिबरेशन डे' टैरिफ केवल संरक्षणवाद का प्रतीक नहीं हैं, बल्कि यह व्यापार के शस्त्रीकरण का एक स्पष्ट उदाहरण है, जहाँ आर्थिक नीतियों का उपयोग भू-राजनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है। भारत, जिसका अमेरिका के साथ एक महत्वपूर्ण व्यापार अधिशेष है, इस नीति के सीधे निशाने पर है। यह स्थिति भारत को अपनी निर्यात-निर्भरता पर पुनर्विचार करने और घरेलू बाजार को विकास के प्राथमिक इंजन के रूप में देखने के लिए मजबूर करती है। इसी तरह, रूस-यूक्रेन संघर्ष ने ऊर्जा की वैश्विक राजनीति को नया मोड़ दिया है। रूस से रियायती दरों पर ऊर्जा आयात करना भारत के लिए एक आर्थिक आवश्यकता थी, विशेषकर जब पारंपरिक आपूर्तिकर्ताओं ने यूरोप की ओर रुख कर लिया था। हालाँकि, यह निर्णय भारत को एक जटिल कूटनीतिक स्थिति में

डालता है। अमेरिका और यूरोपीय संघ के दबाव के बीच, भारत ने अपनी 'रणनीतिक स्वायत्तता' पर जोर दिया है, यह तर्क देते हुए कि उसका ऊर्जा आयात आवश्यक है, जबकि पश्चिम का रूस के साथ व्यापार गैर-आवश्यक वस्तुओं में जारी है। 65 बिलियन डॉलर तक पहुँचता रूस-भारत व्यापार, भारत की ऊर्जा सुरक्षा की मजबूरी को दर्शाता है, लेकिन साथ ही यह उसे पश्चिमी प्रतिबंधों की परिधि में भी लाता है। इन बाहरी झटकों ने नई दिल्ली में एक आम सहमति बनाई है: भारत अपनी आर्थिक नियति को पूरी तरह से वैश्विक ताकतों के भरोसे नहीं छोड़ सकता; उसे अपनी आंतरिक शक्तियों का निर्माण करना होगा।

'दुर्ग' का निर्माण व आत्मनिर्भरता के स्तंभ

भारत की प्रतिक्रिया केवल रक्षात्मक नहीं, बल्कि एक सुविचारित, आक्रामक और बहु-आयामी निर्माण की है। इस 'दुर्ग' की नींव भारत के विशाल और बढ़ते हुए घरेलू बाजार पर टिकी है। 2025 तक आधी से अधिक आबादी का 30 वर्ष से कम आयु का होना और सकल घरेलू उत्पाद में निजी उपभोग का 61.4% हिस्सा होना भारत को एक अद्वितीय रणनीतिक गद्दी प्रदान करता है जो वैश्विक मंदी और व्यापार युद्धों के झटकों को सह सकती है। 2030 तक 7.5 करोड़ मध्यम-आय और 2.5 करोड़ संपन्न परिवारों का अनुमान एक ऐसे उपभोक्ता आधार का निर्माण करेगा जो न केवल घरेलू विकास को गति देगा, बल्कि भारतीय कंपनियों को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धा करने के लिए आवश्यक पैमाना भी प्रदान करेगा।

इस 'दुर्ग' के निर्माण का सबसे महत्वपूर्ण उपकरण प्रोडक्शन लिंक्ड इंसेंटिव योजना है। यह पारंपरिक सब्सिडी मॉडल से अलग है क्योंकि यह केवल निवेश को प्रोत्साहित नहीं करती, बल्कि उत्पादन और बिक्री को सीधे तौर पर पुरस्कृत करती है। 1.76 ट्रिलियन रुपये का निवेश आकर्षित कर चुकी यह योजना कंपनियों को भारत में न केवल निर्माण करने, बल्कि यहाँ से दुनिया के लिए बेचने के लिए प्रेरित करती है। यह 'मेक इन इंडिया' और 'मेक फॉर द वर्ल्ड' के दर्शन का व्यावहारिक रूप है। यह रणनीति भारत को वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं का एक अभिन्न अंग बनाने का लक्ष्य रखती है, लेकिन एक आयातक के रूप में नहीं, बल्कि एक मूल्य-वर्धित निर्माता के रूप में।

यह रणनीति केवल कुछ औद्योगिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं है, बल्कि जीवन के हर पहलू में आत्मनिर्भरता और क्षमता निर्माण का एक राष्ट्रीय अभियान है। 'ऑपरेशन सिंदूर' जैसे अभियानों में स्वदेशी हथियारों का उपयोग और आतंकवाद के प्रति 'असह्यता' की नीति यह दर्शाती है कि भारत अपनी सुरक्षा के लिए बाहरी निर्भरता को तेजी से कम कर रहा है। ऊर्जा क्षेत्र में, सौर क्षमता में 30 गुना वृद्धि, 10 नए परमाणु रिएक्टर, और गहरे पानी में तेल/गैस की खोज भारत को ऊर्जा आयातक से एक आत्मनिर्भर ऊर्जा शक्ति में बदलने की महत्वाकांक्षा को दर्शाते हैं। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में, राष्ट्रीय महत्वपूर्ण खनिज मिशन और छह नई घरेलू सेमीकंडक्टर इकाइयों की स्थापना यह सुनिश्चित करने की दिशा में कदम हैं कि भविष्य की लड़ाइयाँ चिप्स और खनिजों पर लड़ी जाएँ तो भारत कमजोर न पड़े। गगनयान और 300 से अधिक अंतरिक्ष स्टार्टअप भारत की तकनीकी छलांग का प्रतीक हैं। यह दुर्ग केवल कंक्रीट और मशीनों का नहीं, बल्कि लोगों का भी है। डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर (DBT) के माध्यम से 25 करोड़ लोगों तक सामाजिक सुरक्षा पहुँचाना, 'लखपति दीदी' के माध्यम से महिला उद्यमिता को बढ़ावा देना, और 'विकसित भारत रोजगार योजना' के तहत रोजगार सृजन करना यह सुनिश्चित करता है कि विकास समावेशी हो और देश की मानवीय पूंजी को मजबूत करे।

चुनौतियाँ और आगे का मार्ग

यह महत्वाकांक्षी रणनीति चुनौतियों से रहित नहीं है। 'दुर्ग' की दीवारों के भीतर अभी भी कई कमजोरियाँ हैं जिन्हें दूर करने की आवश्यकता है। कमजोर बुनियादी ढांचा, जटिल नियामक प्रक्रियाएँ और कुशल श्रमिकों की कमी अभी भी बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण की राह में रोड़े हैं। UPI और JAM ट्रिनिटी जैसी डिजिटल सफलताएँ भारत की नवाचार क्षमता को दर्शाती हैं, लेकिन इस सफलता को जटिल विनिर्माण क्षेत्र में दोहराना नीतियों के सतत और कुशल क्रियान्वयन पर निर्भर करेगा। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आत्मनिर्भरता का अर्थ अलगाववाद नहीं होना चाहिए। भारत को संरक्षणवाद और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के बीच एक नाजुक संतुलन साधना होगा। 'वोकल फॉर लोकल' का नारा वैश्विक गुणवत्ता मानकों और विदेशी निवेश की आवश्यकता को नजरअंदाज नहीं कर सकता।

2047 का महा-रणनीतिक दाँव

भारत की वर्तमान आर्थिक और विदेश नीति एक अल्पकालिक प्रतिक्रिया नहीं है; यह 'विकसित भारत 2047' के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए एक महा-रणनीतिक दाँव है। यह एक ऐसी दुनिया की तैयारी है जो कम एकीकृत, अधिक प्रतिस्पर्धी और कहीं अधिक अप्रत्याशित होगी। 'दुर्ग' रणनीति का सार यह है कि एक अस्थिर दुनिया में, सबसे विश्वसनीय सहयोगी आपकी अपनी आंतरिक शक्ति ही होती है। यह रणनीति भारत को एक ऐसी स्थिति में लाने का प्रयास है जहाँ वह वैश्विक तूफानों का सामना कर सके, अपनी रणनीतिक स्वायत्तता बनाए रख सके, और अंततः एक ऐसे बिंदु पर पहुँच सके जहाँ वह वैश्विक नियमों को केवल स्वीकार न करे, बल्कि उन्हें आकार देने में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाए। इस 'दुर्ग' की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि भारत अपनी आंतरिक कमजोरियों को कितनी तेजी से दूर करता है और नवाचार की गति को बनाए रखता है। यदि यह सफल होता है, तो यह न केवल भारत के लिए, बल्कि एक बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के लिए एक नया विकास मॉडल प्रस्तुत करेगा—एक ऐसा मॉडल जो राष्ट्रीय हितों को वैश्विक जुड़ाव के साथ संतुलित करता है।

भारत की AI क्रांति और अदृश्य आदिवासी

संदीप सिंह

भारत की डिजिटल क्रांति नई ऊँचाइयाँ छू रही है, लेकिन आदिवासी समुदाय अब भी हाशिये पर है। यह कहानी तकनीकी सपनों और सामाजिक वास्तविकताओं के गहरे विरोधाभास को उजागर करती है।

जब भारत 21वीं सदी में एक वैश्विक तकनीकी महाशक्ति बनने की महत्वाकांक्षा रखता है, जब उसके शहर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), सूचना प्रौद्योगिकी (IT) और फिनटेक के केंद्र के रूप में उभर रहे हैं, और जब मुंबई का दलाल स्ट्रीट देश की आर्थिक नब्ज तय करता है, तब एक मौलिक और असुविधाजनक सवाल उठता हैः भारत की इस नई डिजिटल अर्थव्यवस्था में उसके मूल निवासी, आदिवासी, कहाँ खड़े हैं? यह कहानी एक गहरे विरोधाभास की है। एक ओर खरबों डॉलर के खनिज संसाधनों की भूमि पर बसा भारत का 8.6% आदिवासी समुदाय है, और दूसरी ओर एक ऐसी डिजिटल क्रांति है, जिसकी शब्दावली—निफ्टी, एल्गोरिदम, स्टार्टअप—उनके जीवन के यथार्थ से मीलों दूर है।

राजनीति, खेल और कला में अपनी पहचान बनाने के बावजूद, आदिवासी समुदाय भारत की आधुनिक आर्थिक मुख्यधारा, विशेषकर AI और IT जैसे ज्ञान-आधारित क्षेत्रों से लगभग पूरी तरह से अदृश्य है। यह केवल एक आर्थिक पिछड़ापन नहीं है, बल्कि एक संरचनात्मक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक खाई का परिणाम है, जो डिजिटल युग में और भी चौड़ी होती जा रही है। यह विश्लेषण उन जटिल कारणों की पड़ताल करता है कि क्यों भारत की AI क्रांति में आदिवासी समुदाय एक भागीदार के बजाय एक मूक दर्शक बना हुआ है, और यह जानने की कोशिश करता है कि क्या इस खाई को पाटना संभव है।

आर्थिक बहिष्कार की जड़ेंः जल, जंगल, जमीन से लेकर डिजिटल डिवाइड तक

आदिवासी समुदाय का AI और IT से अलगाव कोई आकस्मिक घटना नहीं है, बल्कि यह सदियों पुराने संघर्षों और बहिष्करण का आधुनिक विस्तार है।

ऐतिहासिक संघर्ष का वर्तमान स्वरूपः 1855 के हूल विद्रोह से शुरू हुई 'जल, जंगल और जमीन' की लड़ाई आज भी आदिवासी जीवन का केंद्र है। उनका आर्थिक अस्तित्व आज भी खेती, वनोपज संग्रहण और दिहाड़ी मजदूरी जैसे असंगठित क्षेत्रों पर टिका है। जिस समुदाय ने दुनिया को लोहा गलाने की कला (असुर जनजाति) दी, वह आज अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है। जब किसी समुदाय की ऊर्जा अपनी मूलभूत पहचान और संसाधनों को बचाने में लगी हो, तो उससे शेयर बाजार और कोडिंग की भाषा में निपुण होने की उम्मीद करना एक क्रूर विडंबना है। वे अभी तक पुरानी औद्योगिक अर्थव्यवस्था में ही पूरी तरह शामिल नहीं हो पाए हैं, ऐसे में ज्ञान-आधार-आधारित अर्थव्यवस्था में उनकी भागीदारी एक दूर क।

सपना लगती है।

सांस्कृतिक और दार्शनिक भिन्नता: प्रसिद्ध अर्थशास्त्री ज्यां द्रेज के अनुसार, बाजार की संरचना—जिसमें एक मालिक मुनाफा कमाता है और बाकी मजदूरी करते हैं—आदिवासी स्वभाव के विपरीत है। उनकी सामाजिक व्यवस्था सामुदायिकता, सहयोग और प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व पर आधारित है, न कि व्यक्तिगत लालच और धन संचय पर। इसका अर्थ यह नहीं कि उन्हें आर्थिक तरक्की नहीं चाहिए, बल्कि यह कि आधुनिक पूंजीवाद का आक्रामक और व्यक्तिवादी मॉडल उनके जीवन दर्शन से मेल नहीं खाता। यही कारण है कि जोखिम और सट्टेबाजी पर आधारित शेयर बाजार जैसी अवधारणाएं उनके लिए न केवल अपरिचित हैं, बल्कि सांस्कृतिक रूप से विजातीय भी हैं।

डिजिटल डिवाइड: बहिष्कार का नया हथियारः भारत भले ही दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती डिजिटल अर्थव्यवस्थाओं में से एक हो, लेकिन यह विकास असमान है। अधिकांश आदिवासी क्षेत्र आज भी विश्वसनीय इंटरनेट कनेक्टिविटी, डिजिटल उपकरणों और डिजिटल साक्षरता से वंचित हैं। जब ऑनलाइन शिक्षा, ई-कॉमर्स और डिजिटल वित्तीय सेवाएं ही पहुंच से बाहर हों, तो AI और मशीन लर्निंग जैसे उन्नत क्षेत्रों में कौशल विकास की कल्पना करना भी मुश्किल है। यह डिजिटल डिवाइड बहिष्कार का एक नया और शक्तिशाली रूप है, जो उन्हें आधुनिक अवसरों से और भी दूर धकेल रहा है।

नीतियों का मायाजाल: अच्छी मंशा, असफल परिणाम

ऐसा नहीं है कि सरकार ने इस समस्या को पूरी तरह से नजरअंदाज किया है। नेशनल शेड्यूल ट्राइब्स फाइनेंस एंड डेवलपमेंट कॉरपोरेशन (एनएसटीएपडीसी) जैसी संस्थाएं आदिवासी उद्यमियों को व्यवसाय और उच्च शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं। आंकड़ों के अनुसार, पिछले पांच वर्षों (2020-25) में 16,650 करोड़ रुपये का ऋण वितरित किया गया। लेकिन इन चमकदार आंकड़ों के पीछे एक निराशाजनक सच्चाई छिपी है।

असली लाभार्थी तक पहुंच का अभाव: बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के डॉ. आशीष कांत चौधरी बताते हैं कि यह फंड अक्सर उन बिचौलियों या गैर-सरकारी संगठनों के पास चला जाता है जो 'आदिवासियों के लिए' काम कर रहे हैं, न कि सीधे आदिवासियों तक। वे उदाहरण देते हैं कि कैसे बिचौलिए आदिवासियों से 100 रुपये किलो चिरौंजी खरीदकर बाजार में 1200 रुपये में बेचते हैं, जिससे असली मुनाफा उनकी जेब में जाता है।

सरकार की विरोधाभासी भूमिका: ट्राइबल चैंबर ऑफ कॉमर्स की डॉ. वासवी कीड़ो सरकार की भूमिका पर एक और गंभीर सवाल उठाती हैं। उनके अनुसार, सरकार सहकारी समितियों के माध्यम से आदिवासियों से वनोपज (जैसे चिरौंजी) 30 रुपये किलो खरीदती है और फिर बड़ी कंपनियों को नीलामी में ऊंचे दामों पर बेच देती है। इस प्रक्रिया में, जो सरकार उनकी रक्षक होनी चाहिए थी, वह स्वयं एक 'नई महाजन' की भूमिका निभाने लगती है, जो उनके संसाधनों का शोषण कर मुनाफा कमाती है।

योजनाओं की जमीनी विफलता: योजनाओं के डिजाइन और उनकी पहुंच में भी भारी खामियां हैं। आंध्र प्रदेश का उदाहरण चौंकाने वाला है, जहाँ पिछले पाँच वर्षों में एक भी आदिवासी महिला ने एनएसटीएपडीसी की 2 लाख रुपये वाली महिला सशक्तीकरण योजना के लिए आवेदन नहीं किया। यह दिखाता है कि या तो योजनाओं की जानकारी उन तक नहीं पहुँच रही है, या प्रक्रिया इतनी जटिल है कि वे इसका लाभ नहीं उठा पा रही हैं, या फिर वे उस स्तर का जोखिम लेने में सक्षम ही नहीं हैं।

शिक्षा: समाधान या एक और बाधा?

शिक्षा को अक्सर इस खाई को पाटने के अंतिम समाधान के रूप में देखा जाता है। आदिवासी समुदाय में साक्षरता दर का कम होना निश्चित रूप से एक बड़ी बाधा है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के डॉ. राजकुमार सिंह गोंड बताते हैं कि जो आदिवासी शिक्षित होकर शहरों में आए हैं, उनकी प्राथमिकता भी एक सुरक्षित नौकरी पाना है, न कि शेयर बाजार जैसे जोखिम भरे क्षेत्रों में निवेश करना। उनकी पिछली पीढ़ियों ने बड़ी मुश्किल से स्थिरता हासिल की है, और वे उसे खोना नहीं चाहते।

एनएसटीएपडीसी उच्च शिक्षा के लिए ऋण प्रदान करती है, और

डिजिटल कनेक्टिविटी को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक शिक्षा: शिक्षा प्रणाली में AI, कोडिंग और डिजिटल वित्त जैसे विषयों को शामिल करना होगा, लेकिन इसे उनकी अपनी भाषा और सांस्कृतिक संदर्भ में पढ़ाया जाना चाहिए ताकि वे इसे आसानी से अपना सकें।

समुदाय-आधारित मॉडल को बढ़ावा: ज्यां द्रेज के सुझाव के अनुसार, व्यक्तिगत उद्यमिता के बजाय सहकारी मॉडल को बढ़ावा देना अधिक प्रभावी हो सकता है। पशुपालन, जड़ी-बूटी प्रसंस्करण, और इको-टूरिज्म जैसे क्षेत्रों में AI और IT का उपयोग कर स्थानीय संसाधनों का मूल्यवर्धन किया जा सकता है। इससे समुदाय का सशक्तिकरण होगा और मुनाफा भी समुदाय के भीतर रहेगा।

बिचौलियों का उन्मूलन और सीधा बाजार लिंक: सरकार को ऐसी तकनीक-आधारित प्रणालियाँ बनानी चाहिए जो आदिवासी उत्पादकों को सीधे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों से जोड़ें, ताकि बिचौलिए उनके मुनाफे का शोषण न कर सकें।

जमशेदपुर के सफल आदिवासी उद्यमी रौशन हेम्ब्रम की बात महत्वपूर्ण है कि समुदाय को अपनी ऊर्जा शिक्षा और आर्थिक विकास पर केंद्रित करनी होगी। लेकिन यह जिम्मेदारी केवल समुदाय की नहीं है। यह सरकार, उद्योग और नागरिक समाज की भी जिम्मेदारी है कि वे एक ऐसा समावेशी पारिस्थितिकी तंत्र बनाएं जहाँ भारत की AI क्रांति का लाभ देश के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे। यदि ऐसा नहीं हुआ, तो हम एक ऐसी डिजिटल दुनिया का निर्माण करेंगे जो तकनीकी रूप से उन्नत तो होगी, लेकिन सामाजिक रूप से उतनी ही विभाजित और अन्यायपूर्ण होगी जितनी पुरानी दुनिया थी।

पिछले पाँच वर्षों में लगभग 6 लाख छात्रों ने इसका लाभ उठाया है। यह एक सकारात्मक संकेत है। लेकिन केवल डिग्री हासिल करना पर्याप्त नहीं है। शिक्षा की गुणवत्ता, पाठ्यक्रम की प्रासंगिकता और डिजिटल कौशल का समावेश अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि शिक्षा उन्हें केवल पारंपरिक नौकरियों के लिए तैयार करती है, तो वे AI और IT की दौड़ में फिर से पीछे छूट जाएंगे।

आगे का रास्ता: एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता

आदिवासी समुदाय को भारत की AI और IT क्रांति में शामिल करने के लिए एक बहुआयामी और संवेदनशील दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो केवल वित्तीय सहायता से कहीं आगे हो।

डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर का निर्माण: पहला कदम आदिवासी बहुल क्षेत्रों में विश्वसनीय और सस्ती इंटरनेट कनेक्टिविटी सुनिश्चित करना है। पीएम-जनमन और अन्य योजनाओं के तहत बुनियादी ढांचे के विकास में

युद्धक्षेत्र में AI
किस दिशा में देख रही है दुनिया?

मनोज कुमार

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उज्ज्वल चेहरा मानवता की प्रगति और आर्थिक अवसरों को दिखाता है, तो उसका स्याह पक्ष युद्धभूमि पर घातक स्वायत्त हथियारों का निर्माण कर रहा है। यह आलेख इसी दोहरेपन और उसके वैश्विक खतरे की पड़ताल करता है।

एआई का एक नहीं, बल्कि दो चेहरे हैं। एक चेहरा वह है जिसे दुनिया के नेता, जैसे कि 2025 के जी7 शिखर सम्मेलन में एकत्रित हुए, देखना और दिखाना पसंद करते हैं—यह चेहरा उज्ज्वल, आशावादी और प्रगति का प्रतीक है। यह AI को आर्थिक विकास के इंजन, सार्वजनिक सेवाओं को सुगम बनाने वाले सहायक और मानवता की जटिल समस्याओं का समाधान करने वाले एक क्रांतिकारी उपकरण के रूप में देखता है। यह वह चेहरा है जो ऊर्जा समाधानों के लिए करोड़ों डॉलर के कोष की घोषणा करता है।

लेकिन AI का एक दूसरा, स्याह और अनदेखा चेहरा भी है, जो राजनयिकों की चमचमाती मेजों से बहुत दूर, युद्ध के धूल और धुएं भरे मैदानों में आकार ले रहा है। यह चेहरा स्वायत्त है, गणनात्मक है

और घातक है। यह वह AI है जो लक्ष्य निर्धारित करता है, ड्रोन को निर्देशित करता है और इंसानी हस्तक्षेप के बिना जीवन और मृत्यु का निर्णय लेता है। कनाडा में जब जी7 के नेता AI के नागरिक लाभों पर चर्चा कर रहे थे, ठीक उसी समय यह दूसरा AI मध्य पूर्व से लेकर पूर्वी यूरोप तक, युद्ध के सिद्धांतों को चुपचाप और स्थायी रूप से बदल रहा था। यह आलेख इसी खतरनाक दोहरेपन का विश्लेषण करता है—एक तरफ हमारी सार्वजनिक आकांक्षाएं और दूसरी तरफ हमारी गुप्त सैन्य वास्तविकताएं, और कैसे पहली की चकाचौंध में हम दूसरी से उत्पन्न हो रहे अस्तित्वगत खतरे को नजरअंदाज कर रहे हैं।

जी7 का आर्थिक प्रिज्म

जी7 का 2025 का एजेंडा यह दर्शाता है कि दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाएँ AI को मुख्य रूप से एक आर्थिक अवसर के रूप में देखती हैं। यूरोपीय संघ का व्यापक AI अधिनियम, जो प्रौद्योगिकी के नागरिक उपयोग को विनियमित करने का दुनिया का पहला बड़ा प्रयास है, इस दृष्टिकोण का प्रतीक है। इसी तरह, ब्रिटेन द्वारा सार्वजनिक प्रशासन में AI के उपयोग से सालाना 45 अरब पाउंड की बचत का अनुमान लगाना और कनाडा द्वारा जनसेवाओं में AI को एकीकृत करने की घोषणा, सभी इसी आर्थिक तर्क से प्रेरित हैं। यह दृष्टिकोण स्वाभाविक है, क्योंकि AI में उत्पादकता बढ़ाने, स्वास्थ्य सेवा में क्रांति लाने और जटिल वैज्ञानिक समस्याओं को हल करने की अपार क्षमता है।

हालाँकि, इस आर्थिक आशावाद में एक रणनीतिक चूक है। यह इस तथ्य की अनदेखी करता है कि सैन्य प्रौद्योगिकी का विकास नागरिक प्रौद्योगिकी के विकास के समानांतर चलता है, और अक्सर उससे कहीं ज़्यादा तेज़ गति से। यूरोपीय संघ के AI अधिनियम में रक्षा और राष्ट्रीय सुरक्षा के मामलों को स्पष्ट रूप से छूट देना इस समस्या का सबसे बड़ा उदाहरण है। यह छूट एक खतरनाक मिसाल कायम करती है, जहाँ प्रौद्योगिकी का सबसे घातक उपयोग नियामक जांच के दायरे से पूरी तरह बाहर रह जाता है। जी7, जो मुख्य रूप से एक आर्थिक समूह है, शायद सैन्य विनियमन के लिए सबसे उपयुक्त मंच न हो, लेकिन दुनिया के सबसे शक्तिशाली लोकतंत्रों के समूह के रूप में, इसकी नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि वह इस मुद्दे को संबोधित करे। ऐसा न करके, यह समूह मौन रूप से उस हथियार-प्रणाली के विकास को स्वीकृति दे रहा है, जो भविष्य के युद्धों की प्रकृति को मौलिक रूप से बदल सकती है।

रिपोर्टों से पता चलता है कि इन प्रणालियों ने लक्ष्य पहचान में गंभीर त्रुटियाँ कीं और नागरिक हताहतों की एक अस्वीकार्य संख्या में योगदान दिया। यहाँ सबसे बड़ा नैतिक सवाल यह उठता है कि जब एक एल्गोरिथम द्वारा सुझाए गए लक्ष्य पर हमला किया जाता है, तो उसकी जिम्मेदारी किसकी होती है?

युद्ध के मैदान का नया यथार्थ

AI से लैस हथियारों की होड़ अब कोई भविष्य की आशंका नहीं, बल्कि एक वर्तमान वास्तविकता है। मध्य पूर्व से लेकर पूर्वी यूरोप और दक्षिण एशिया तक, संघर्ष क्षेत्र AI-संचालित युद्ध प्रणालियों के लिए परीक्षण प्रयोगशाला बन गए हैं।

मध्य पूर्व

इज़राइल द्वारा गाजा पट्टी में 'हबसोरा', 'लैवेंडर' और 'डैडी' जैसे AI सिस्टम का उपयोग इस बात का भयावह उदाहरण है कि युद्ध में निर्णय लेने की प्रक्रिया कैसे मशीनों को सौंपी जा रही है। ये सिस्टम खुफिया डेटा के विशाल भंडार का विश्लेषण कर हवाई हमलों के लिए संभावित लक्ष्य निर्धारित करते हैं। रिपोर्टों से पता चलता है कि इन प्रणालियों ने लक्ष्य पहचान में गंभीर त्रुटियाँ कीं और नागरिक हताहतों की एक अस्वीकार्य संख्या में योगदान दिया। यहाँ सबसे बड़ा नैतिक सवाल यह उठता है कि जब एक एल्गोरिथम द्वारा सुझाए गए लक्ष्य पर हमला किया जाता है, तो उसकी जिम्मेदारी किसकी होती है—प्रोग्रामर, कमांडर, या स्वयं मशीन की? यह 'मानव-लूप-से-बाहर' युद्ध की स्थिति है, जो अंतरराष्ट्रीय मानवीय कानूनों की नींव को चुनौती देती है।

रूस-यूक्रेन युद्ध

यह संघर्ष आधुनिक इतिहास का पहला बड़ा युद्ध है जिसे आंशिक रूप से AI द्वारा संचालित किया जा रहा है। यह ड्रोन युद्ध का एक जीवंत उदाहरण है, जहाँ दोनों पक्ष लगातार नई-नई स्वायत्त प्रणालियाँ विकसित और तैनात कर रहे हैं। यूक्रेनी नौसैनिक ड्रोन्स ने काला सागर में रूसी युद्धपोतों को सफलतापूर्वक निशाना बनाया है, जिससे पारंपरिक नौसैनिक शक्ति का समीकरण बदल गया है। वहीं, दोनों सेनाएँ लक्ष्यों की पहचान, इलेक्ट्रॉनिक युद्ध और खुफिया जानकारी के विश्लेषण के लिए AI का उपयोग कर रही हैं। यह युद्ध इस बात का प्रमाण है कि AI अब केवल एक सहायक तकनीक नहीं, बल्कि सैन्य रणनीति का एक केंद्रीय तत्व बन गया है।

भारत-पाकिस्तान संघर्ष

2025 के भारत-पाकिस्तान संकट ने यह स्पष्ट कर दिया कि AI-संचालित ड्रोन युद्ध अब केवल महाशक्तियों तक सीमित नहीं है। इस संघर्ष में पहली बार दोनों देशों ने पारंपरिक सैन्य अभियानों के साथ-साथ सीमा पार हमलों के लिए बड़े

पैमाने पर ड्रोन का इस्तेमाल किया। भारत द्वारा इज़राइल निर्मित हारोप ड्रोन और स्वदेशी नागास्त्र-1 का उपयोग, पाकिस्तान के तुर्की-निर्मित ड्रोन्स को बेअसर करने के लिए किया गया। यह संघर्ष भारत की रक्षा रणनीति में एक महत्वपूर्ण बदलाव को भी रेखांकित करता है—विदेशी आयातों पर निर्भरता से हटकर हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड के कास्ट वारियर और स्वार्म ड्रोन सिस्टम जैसे स्वदेशी प्लेटफॉर्म के विकास पर ज़ोर देना। यह प्रवृत्ति एक क्षेत्रीय AI हथियारों की होड़ का संकेत देती है, जिसके दूरगामी भू-राजनीतिक परिणाम होंगे।

बहुपक्षीय विफलता

AI के सैन्य उपयोग की तीव्र गति के बावजूद, बहुपक्षीय मंचों की प्रतिक्रिया धीमी, खंडित और काफी हद तक अप्रभावी रही है। यूरोपीय संघ के AI अधिनियम जैसी महत्वपूर्ण पहल भी रक्षा क्षेत्र को अपनी परिधि से बाहर रखती है। इस कारण, ये क्रांतिकारी परिवर्तन एक ऐसे नीतिगत शून्य में हो रहे हैं, जहाँ कोई निगरानी या अंतरराष्ट्रीय मानक मौजूद नहीं हैं।

हालाँकि, कुछ प्रयास अवश्य हुए हैं। नीदरलैंड्स (2023) और दक्षिण कोरिया (2024) में आयोजित 'सेना में AI के जिम्मेदार उपयोग' (REAIM) पर शिखर सम्मेलन, संयुक्त राष्ट्र निरस्त्रीकरण अनुसंधान संस्थान (UNIDIR) की भूमिका, और पेरिस में AI एक्शन समिट जैसे मंचों ने इस मुद्दे पर संवाद को बढ़ावा दिया है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेस ने 2026 तक स्वायत्त हथियारों पर कानूनी रूप से बाध्यकारी नियम बनाने का आह्वान किया है, और सितंबर 2024 के 'पैक्ट फॉर द फ्यूचर' में भी AI के सैन्य उपयोग से जुड़े जोखिमों के नियमित मूल्यांकन का सुझाव दिया गया है।

समस्या यह है कि ये सभी पहलें स्वैच्छिक हैं और इनमें प्रवर्तन की शक्ति का अभाव है। जी7 जैसे शक्तिशाली समूह इन चर्चाओं से अनुपस्थित रहकर या उन्हें केवल औपचारिक समर्थन देकर अपनी जिम्मेदारी से बच नहीं सकते। इन देशों के पास आर्थिक और राजनीतिक शक्ति है कि वे इन बिखरे हुए प्रयासों को ए=क ठोस, वैश्विक नियामक ढांचे में एकीकृत करने का नेतृत्व कर सकते हैं।

दोहरी राह अपनाने की तत्काल आवश्यकता

जी7 का 2025 का शिखर सम्मेलन AI के प्रति दुनिया के दोहरे और विरोधाभासी दृष्टिकोण का प्रतीक है। एक तरफ, हम AI को मानव प्रगति के अगले चरण के रूप में देखते हैं, जो आर्थिक समृद्धि और सामाजिक कल्याण ला सकता है। दूसरी तरफ, हम उसी तकनीक को अधिक घातक और स्वायत्त युद्ध प्रणालियाँ बनाने के लिए उपयोग कर रहे हैं, जो मानवता के लिए एक अस्तित्वगत खतरा पैदा कर सकती हैं।

केवल आर्थिक लाभों पर ध्यान केंद्रित करना एक अदूरदर्शी और खतरनाक रणनीति है। AI के सैन्य उपयोग को अनियंत्रित छोड़ देना न केवल वैश्विक अस्थिरता को बढ़ाएगा, बल्कि यह उस भरोसे को भी खत्म कर देगा जो किसी भी प्रौद्योगिकी को समाज में व्यापक रूप से अपनाने के लिए आवश्यक है।

अब समय आ गया है कि जी7 और अन्य अंतरराष्ट्रीय निकाय एक दोहरी राह अपनाएँ। उन्हें AI के सकारात्मक अनुप्रयोगों को बढ़ावा देना जारी रखना चाहिए, लेकिन साथ ही, इसके सैन्य उपयोग को नियंत्रित करने के लिए एक मजबूत, बाध्यकारी और सत्यापन योग्य अंतरराष्ट्रीय संधि बनाने की दिशा में तत्काल और ठोस कदम उठाने चाहिए। इसमें 'मानव नियंत्रण' के सिद्धांत को कानूनी रूप से स्थापित करना, कुछ विशेष प्रकार के स्वायत्त हथियारों (जैसे कि चेहरे की पहचान के आधार पर लक्ष्य बनाने वाले सिस्टम) पर पूर्ण प्रतिबंध लगाना, और प्रौद्योगिकी के प्रसार को रोकने के लिए निर्यात नियंत्रण व्यवस्था बनाना शामिल हो सकता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का भविष्य केवल हमारे द्वारा बनाए गए एल्गोरिदम से नहीं, बल्कि उन नैतिक और कानूनी सीमाओं से भी तय होगा जो हम उसके चारों ओर बनाते हैं। यदि हमने युद्ध के मैदान को इस विमर्श से बाहर रखा, तो हम एक जिम्मेदार तकनीकी भविष्य की लड़ाई हारने का जोखिम उठाएँगे।

A platform dedicated to geopolitical and global affairs, as well as analysis related to India and Indianness

CULT CURRENT

WE MAKE VIEWS

Join the YouTube channel ›

भारत के युद्धक टैंक भविष्य का संतुलन

कार्तिक बोम्माकांति

पिछले एक आलेख में लेखक ने गतिशीलता (मोबिलिटी) के महत्व पर ध्यान दिलाया था और यह बताया था कि भारत के भविष्य-उन्मुख युद्धक वाहन (फ्यूचर रेडी कॉम्बैट व्हीकल – एफआरसीवी) के डिज़ाइन में इसे प्राथमिकता दी जानी चाहिए। लेकिन केवल गतिशीलता को ध्यान में रखकर एफआरसीवी मुख्य युद्धक टैंक (एमबीटी) तैयार करना आवश्यक तो है, पर पर्याप्त नहीं। भारतीय सेना (आईए) को इस एफआरसीवी को इस तरह एकीकृत करना होगा कि वह सेना की उभरती हुई इंटीग्रेटेड बैटल ग्रुप्स (आईबीजीज़) के अन्य हथियारों के साथ तालमेल और सहयोग में इस्तेमाल किया जा सके।

आने वाले युद्धों के लिए भारतीय सेना को गतिशीलता या सुरक्षा, किस टैंक रणनीति को अपनाना चाहिए? रूस-यूक्रेन के सबक और आईबीजी की बदलती ज़रूरतें इस निर्णायक संतुलन को परिभाषित कर रही हैं, जहाँ भारी कवच का बोझ गतिशीलता पर भारी पड़ सकता है।

यह बात भले ही स्पष्ट लगे, लेकिन यह सीधे टैंक डिज़ाइन की तीन बुनियादी विशेषताओं पर असर डालती है—गतिशीलता, सुरक्षा/जीवित रहने की क्षमता और मारक शक्ति। इसके साथ ही रखरखाव (मेंटेनेबिलिटी) का पहलू भी जुड़ता है। भारी कवच (आर्मर) के रूप में सुरक्षा का रखरखाव से सकारात्मक संबंध देखा गया है, जैसा कि रूस-यूक्रेन युद्ध ने दिखाया है, जहाँ पश्चिमी कवच के लाभ सामने आए। यह तुलना भारत की युद्ध-पद्धति, विशेषकर उसकी मैनूवर वॉरफेयर और टैंक गतिशीलता-आधारित आईबीजीज़ के साथ मददगार होगी, जो संयुक्त युद्धक कार्रवाई में सक्षम हैं और भारतीय टैंकों की कमजोरियों को संतुलित करते हुए उन्हें गतिशीलता व

सुरक्षा प्रदान करती हैं।

रूस-यूक्रेन युद्ध से भारतीय योजनाकारों के लिए एक बड़ा सबक रखरखाव है। जैसा कि लेखक ने पहले कहा था, एफआरसीवी के डिज़ाइन में गतिशीलता को प्राथमिकता मिलनी चाहिए, लेकिन भारत की मौजूदा मध्यम-वज़न बख़्तरबंद सेनाएँ कभी-कभी सुरक्षा की कीमत पर आती हैं। यहीं संयुक्त युद्धक कार्रवाई (कंबाइंड आर्म्स ऑपरेशंस) निर्णायक हो जाती है, ताकि टैंक विशिष्ट मिशन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अधिकतम प्रभावी और सुरक्षित रह सके। यही कार्रवाई एफआरसीवी टैंक की परिचालनगत गतिशीलता भी सुनिश्चित करेगी।

भारतीय आईबीजीज़ में कवच (आर्मर) की भूमिका महत्वपूर्ण रहेगी। अभी दो अलग-अलग तरह के आईबीजीज़ की योजना है—एक चीन (पीआरसी) के लिए और दूसरा पाकिस्तान के लिए। नवंबर 2024 में भारतीय सेना ने आईबीजी के गठन के लिए सरकार से अनुमति माँगी थी, जो अब तक लंबित है। आईबीजी में मुख्यतः मशीनीकृत पैदल सेना, तोपख़ाना, कवच, वायु रक्षा और मानव रहित हवाई वाहन (यूएवीज़) शामिल होंगे, और प्रत्येक में लगभग 5,000–6,000 सैनिक होंगे।

हालाँकि जुलाई 2025 के अंत में भारतीय सेना ने दो रुद्र ब्रिगेड बनाने का निर्णय लिया। ये व्यापक तौर पर संभावित आईबीजीज़ की झलक दिखाती हैं और कुछ एकल-हथियार ब्रिगेडों (लगभग 3,000 सैनिकों वाली) को बहु-हथियार इकाइयों में बदलने का प्रतीक हैं, जिनमें यूएवी, पैदल सेना, मशीनीकृत पैदल सेना, टैंक-रोधी इकाइयाँ, टैंक, तोपख़ाना और स्पेशल फ़ोर्सेज (एसएफ) शामिल होंगी। रुद्र ब्रिगेडें भारत की सीमाओं के चुनिंदा इलाक़ों में तैनात होंगी, लेकिन उनका महत्व अभी संक्रमणकालीन है। संभवतः यही आगे चलकर आईबीजी के परीक्षण मंच (टेस्ट बेड) की तरह काम करेंगी।

भविष्य के आईबीजी निश्चित रूप से रुद्र ब्रिगेडों से कहीं अधिक बड़े, बेहतर सुसज्जित और संयुक्त युद्धक कार्रवाई के लिए विशेष प्रशिक्षण प्राप्त होंगे। मोदी सरकार को इनके गठन के लिए तेज़ी से कदम उठाने की आवश्यकता है।

आईबीजी भारत की कोल्ड स्टार्ट डॉक्ट्रिन (सीएसडी) का ही परिणाम हैं। इसे स्वीकार तो किया गया है, लेकिन आधिकारिक रूप से घोषित नहीं किया गया। इसका मक़सद तेज़ी से सेनाओं का जुटाव और तैनाती करना है। पहले ऐसा संभव नहीं था, क्योंकि भारतीय सेना की तीन स्ट्राइक कोर को लामबंद होने में लंबा समय लगता था। पाकिस्तान के ख़िलाफ़ आक्रामक अभियानों में इनका इस्तेमाल किया जाता था। ये ज़मीनी हमले भारतीय वायुसेना के सहयोग से पाकिस्तान को उसकी रक्षा व्यवस्था खड़ी करने से पहले ही जवाब देने या भारतीय भूभाग पर हमले की स्थिति में उसके क्षेत्र पर क़ब्ज़ा करके स्टेटस-क्वो एंटे बहाल करने के लिए किए जाते थे, जैसा 1965 के भारत-पाक युद्ध में हुआ था।

दूसरी ओर, चीन-केन्द्रित आईबीजी अलग तरह से संरचित होंगे। इनमें हल्के युद्धक टैंकों (लाइट बैटल टैंक – एलबीटी) के दो नए मॉडल, मौजूदा टी-90 और पुराने टी-72 शामिल होंगे। चीन-केन्द्रित आईबीजी अपेक्षाकृत हल्के होंगे और वायु-समर्थन से सुदृढ़ किए जाएँगे।

भारत का पिछला युद्ध अनुभव, ख़ासकर पाकिस्तान के साथ, यह दिखाता है कि कवच-आधारित मैनूवर ऑपरेशनों को सफलतापूर्वक अंजाम दिया गया है। उदाहरण के लिए, 1971 के युद्ध में बसंतर की लड़ाई में 16वीं बख़्तरबंद ब्रिगेड के सेंचुरियन टैंकों ने पाकिस्तान के पैटन टैंकों को मात दी। यहाँ टैंक चालक दल बेहतरीन ढंग से प्रशिक्षित थे, उन्हें नज़दीकी अग्नि समर्थन मिला और उन्होंने तोपख़ाने व इंजीनियर रेजिमेंटों की मदद से बारूदी सुरंगें भी पार कीं। यह संयुक्त युद्धक कार्रवाई का शानदार उदाहरण है, जिसमें टैंकों की कमजोरियों को अन्य हथियारों के सहयोग से संतुलित किया गया।

रुद्र ब्रिगेड और भविष्य के आईबीजी संयुक्त युद्धक कार्रवाई की आवश्यकता को आंशिक रूप से कम कर सकते हैं, यदि भारतीय सेना भारी युद्धक टैंक भी विकसित करे, जैसे ब्रिटिश सेना का चैलेंजर-3 टैंक (66.5 टन वज़न, अपने पूर्ववर्ती चैलेंजर-2 से तीन टन अधिक)। ये टैंक भारतीय सेना के अर्जुन MkA1 के लगभग बराबर भारी हैं। चैलेंजर-3, Ajax Infantry Fighting Vehicle और Boxer जैसे लड़ाकू वाहनों के साथ मिलकर अग्नि समर्थन व यंत्रीकृत प्रभुत्व हासिल करेगा। 2027 तक पूरी तरह सक्रिय होने पर इनमें उन्नत सेंसर भी होंगे, और ये रखरखाव व मॉड्यूलरिटी में सक्षम होंगे।

ब्रिटेन ने भारी टैंकों को प्राथमिकता इसलिए दी है क्योंकि उनका उद्देश्य अट्रिशनल वॉरफेयर (एट्रिशनल वॉरफेयर) है, जिसमें गतिशीलता से अधिक सुरक्षा अहम है। भारी टैंकों की मरम्मत और रिकवरी आसान होती है। इससे प्रशिक्षित चालक दल की जान बचाई जा सकती है। यदि टैंक क्षतिग्रस्त भी हो जाए तो सुरक्षित चालक दल को तुरंत नए टैंक में तैनात किया जा सकता है। लेकिन यदि प्रशिक्षित चालक दल मारा जाए या गंभीर रूप से घायल हो, तो उनका प्रतिस्थापन आसान नहीं होता, क्योंकि प्रशिक्षण में समय लगता है। अनुभवहीन चालक दल को जल्दबाज़ी में भेजना स्थिति और बिगाड़ सकता है। इससे अभियानों की गति धीमी हो जाती है और युद्ध लंबे खिंच सकते हैं या हार में बदल सकते हैं।

हालाँकि भारी कवच के ये फायदे हैं, लेकिन भारत का अनुभव मिला-जुला रहा है, कभी-कभी असफल भी। उदाहरण के लिए, अर्जुन जैसे भारी टैंकों का पाकिस्तान के ख़िलाफ़ उच्च-गति वाले आक्रामक अभियानों में उपयोग नहीं किया गया। यदि किया भी जाए तो उनका टिकाव और रसद का बोझ बेहद भारी पड़ता है।

भारी उपकरण परिवाहकों (हैवी इक्विपमेंट ट्रांसपोर्टर्स – एचईटीज़) के ज़रिए अर्जुन टैंक का परिवहन करना इसकी तैनाती में गंभीर चुनौतियाँ पैदा करता है। भारतीय सेना को अब तक अर्जुन को वास्तविक युद्ध में तैनात करने का कोई अनुभव नहीं है। इसके अलावा, अर्जुन की गतिशीलता में जो सीमाएँ हैं, वे रेगिस्तानी इलाक़े राजस्थान में भी—जहाँ इसे तैनात किया जाना संभावित है—सिर्फ़ रक्षात्मक अभियानों में ही बड़ी बाधा साबित होंगी।

अर्जुन के मामले में रसद (लॉजिस्टिक्स) की कमी और युद्ध के दौरान क्षतिग्रस्त हिस्सों की मरम्मत एक गंभीर समस्या है। इसकी शांति-कालीन तैनाती पर किए गए अध्ययनों ने भी यह बताया है कि इसमें पुर्ज़ों की कमी और मरम्मत की कठिनाइयाँ बार-बार सामने आती रही हैं।

भारत ने आईबीजी रणनीति के तहत उच्च-गति वाले आक्रामक अभियानों के लिए प्रतिबद्धता दिखाई है, और ऐसे अभियानों में अर्जुन की कोई वास्तविक भूमिका नहीं बनती। पाकिस्तान के साथ यदि युद्ध होता है और उसमें बख़्तरबंद ऑपरेशन शामिल होते हैं, तो अर्जुन की भूमिका सिर्फ़ मोबाइल या ब्लॉकिंग डिफेंसिव एक्शन तक सीमित होगी—यानी ऐसी रक्षात्मक तैनाती, जो रसद के लिहाज़ से टिकाऊ हो। यही भूमिका ब्रिटिश चैलेंजर और अमेरिकी अब्राम्स टैंकों ने इराक़ के ख़िलाफ़ निभाई थी, जब उन्होंने सऊदी अरब पर इराक़ी हमले को रोकने का काम किया था, और उसके बाद मित्र देशों की आक्रामक कार्रवाई ने कुवैत को मुक्त कराया। हालाँकि, यह ध्यान देने योग्य है कि आक्रामक अभियानों में रसद और आपूर्ति का बोझ—गोलाबारूद, ईंधन और पुर्ज़ों के लिहाज़ से—कहीं ज़्यादा होता है। इसके अलावा, अमेरिकी और ब्रिटिश सफलता की एक बड़ी वजह यह थी कि उन्हें इराक़ से सीमित प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। पाकिस्तान के ख़िलाफ़ भारत को ऐसी सुविधा मिलने की संभावना नहीं है।

इस प्रकार, 68.5 टन वज़न वाला अर्जुन MkA1, जो विकासाधीन चैलेंजर-3 से दो टन भारी है, रखरखाव और आपूर्ति के लिहाज़ से बेहद भारी पड़ता है। ऐसे में भारत के पास कोई विकल्प नहीं है सिवाय

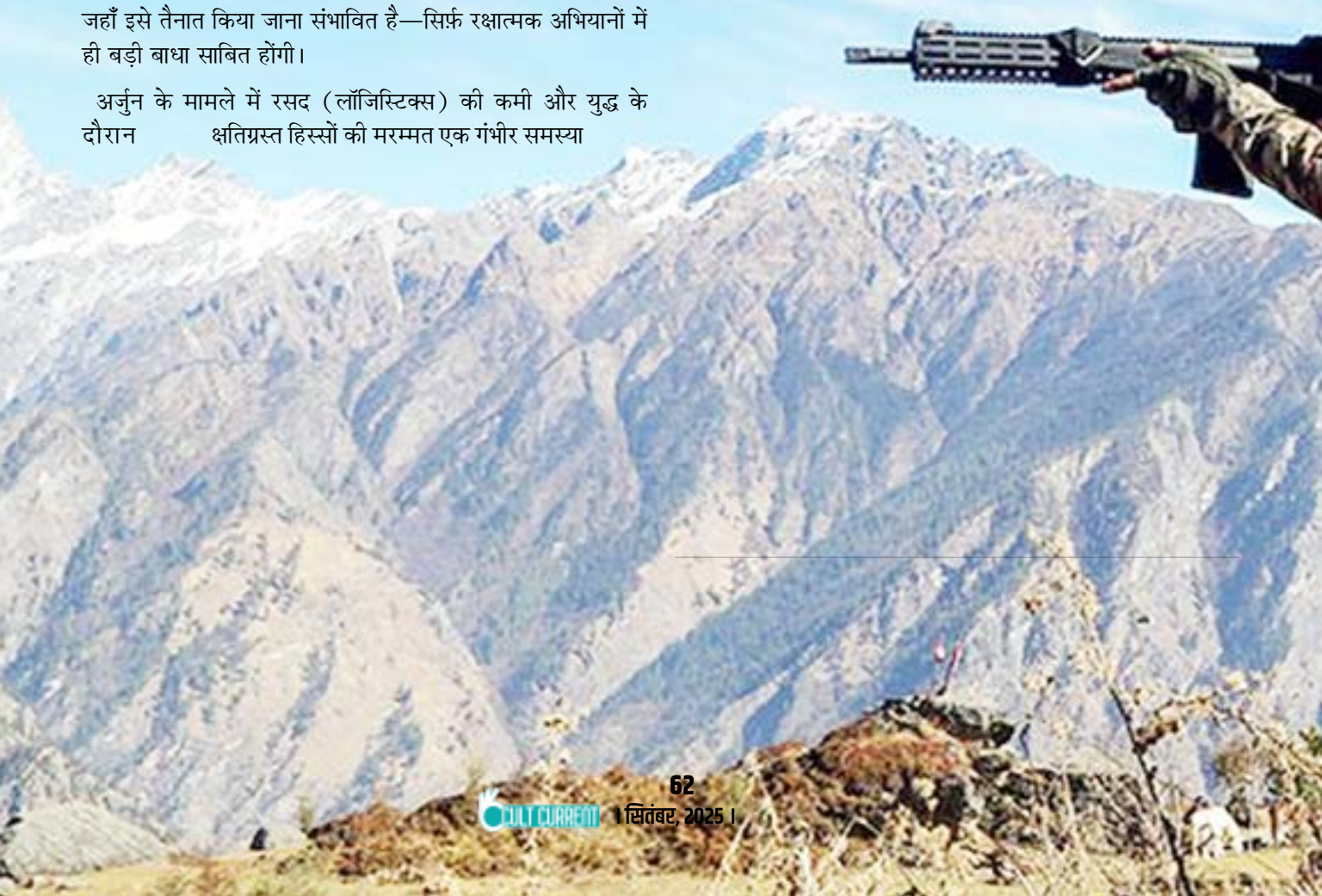

इसके कि वह गतिशीलता को सुरक्षा पर प्राथमिकता दे, ख़ासकर एफआरसीवी जैसे प्रोजेक्ट में। तभी भूमि युद्ध सिद्धांत (लैंड वॉरफेयर डॉक्ट्रिन – एलडब्ल्यूडी) के तहत मोबाइल आक्रामक अभियानों को प्रभावी ढंग से अंजाम दिया जा सकेगा और आईबीजी की सीमित सैन्य उपलब्धियों को हासिल किया जा सकेगा।

चैलेंजर-3 का उदाहरण यह साफ़ दिखाता है कि युद्ध में रखरखाव (मेंटेनेबिलिटी) कितनी अहम है। लेकिन भारत के वर्तमान टैंक बेड़े—जैसे T-90 और T-72—के मामले में यह कठिनाई और भी बढ़ जाती है। ये टैंक मुख्यतः गतिशीलता पर आधारित हैं, सुरक्षा पर नहीं। रूस-यूक्रेन युद्ध ने यह साबित किया है कि T-90 जैसे टैंक भारी क्षति झेल रहे हैं—हवा और ज़मीन दोनों से आने वाले टैंक-रोधी ख़तरों के खिलाफ़ सुरक्षा की कमी और रखरखाव की कमजोरियों के कारण।

फिर भी, मध्यम-वज़न वाले टैंकों का एक लाभ यह है कि वे भारी टैंकों की तुलना में रसद के लिहाज़ से ज़्यादा टिकाऊ होते हैं। भारत के विरोधी—चाहे चीन हो या पाकिस्तान—भारी बख़्तरबंद बलों को तैनात करने वाले नहीं हैं। हालाँकि कुछ आकलन बताते हैं कि यदि एक पक्ष भारी टैंकों का इस्तेमाल करता है और दूसरा नहीं, तो नुकसान ज़्यादा झेलना पड़ सकता है। यही जोखिम तब पैदा होगा यदि पाकिस्तान, लंबे समय में, चीन की मदद से भारी टैंक बल तैनात करने का फ़ैसला करता है।

रूस को यूक्रेन में हुए विनाशकारी नुक़सानों के बावजूद भारत के लिए यह संभव नहीं कि वह अपने मौजूदा और भविष्य के बलों को मध्यम और हल्के टैंकों (T-72, T-90, एलबीटी और एफआरसीवी) से इतर ढांचे में ढाले।

दूसरी ओर, भारतीय सेना और डीआरडीओ अपने विकास साझेदारों के साथ शायद यह अवसर चूक गए कि वे पाकिस्तान के ख़िलाफ़ कम से कम संयुक्त युद्धक कार्रवाई (कंबाइंड आर्म्स ऑपरेशंस) में भारी कवच के फ़ायदों को पहले से पहचान पाते। अब अर्जुन एमबीटी के अपेक्षित प्रदर्शन न कर पाने की वजह से यह रास्ता लगभग बंद हो गया है। यही रूस-यूक्रेन युद्ध का एक और अहम सबक है।

यह लेख ऑब्ज़र्वर रिसर्च फ़ाउंडेशन के सामरिक अध्ययन कार्यक्रम में वरिष्ठ अध्येता कार्तिक बोम्माकांति के शोध आलेख 'Indian Battle Tanks: Medium or Heavy Armour in Combined Arms' से प्राप्त संदर्भों और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण पर आधारित है।

साझा जल विभाजित भविष्य

मो. सैफुद्दीन एवं कृष्ण प्रताप गुप्ता

पाकिस्तान की 2025 की बाढ़ें सिर्फ़ जल प्रलय नहीं, मानवीय पीड़ा का तांडव है। जहाँ जलवायु परिवर्तन कुप्रबंधन से मिलता है, लाखों बेघर होते हैं, फसलें डूबती हैं। रावी का उफ़ान सीमाएँ लांघता है, जो हमें याद दिलाता है कि साझा जल के बीच विभाजित भविष्य कितना भयावह हो सकता है।

पाकिस्तान 2025 की बाढ़ों से एक बार फिर इतिहास की सबसे भयावह प्राकृतिक आपदाओं में से एक का सामना कर रहा है। पंजाब, सिंध और खैबर पख़्तूनख़्वा (केपीके) में सैकड़ों गाँव जलमग्न हो गए, हज़ारों घर बह गए और लाखों लोग विस्थापित हुए। विश्व मौसम विज्ञान अध्ययन (डब्ल्यूडब्ल्यूए) के अनुसार, इस बार की बाढ़ सामान्य मानसूनी पैटर्न से 10–15% अधिक वर्षा का परिणाम है, जो सीधे-सीधे मानवजनित जलवायु परिवर्तन से जुड़ी हुई है। यह केवल एक प्राकृतिक घटना नहीं, बल्कि वैश्विक जलवायु न्याय की अनदेखी, राज्य की नीतिगत विफलताओं और क्षेत्रीय जल-प्रबंधन के अभाव का गूंजता एक जटिल प्रश्न है। रावी नदी के उफान ने पंजाब (भारत) में भी खतरनाक स्थिति पैदा की, जिससे यह विभिषिका सीमाओं के पार साझा संकट बन गई। इस बार की तबाही 2022 की भीषण बाढ़ों की दर्दनाक याद दिलाती है, जो इस बात पर गंभीर सवाल उठाती है कि क्या हमने

पिछली आपदाओं से कोई सबक सीखा है।

मानवीय त्रासदी का विशाल कैनवास

बाढ़ की विभिषिका को केवल आँकड़ों में समेटना मुश्किल है, क्योंकि ये संख्याएँ अनगिनत जिंदगियों की टूटी उम्मीदों और संघर्षों की कहानी कहती हैं। गार्जियन (30 अगस्त 2025) के अनुसार, केवल पंजाब प्रांत में ही 800 से अधिक मौतें और लगभग 1,400 गाँव जलमग्न हुए। समूचे पाकिस्तान में यह संख्या 2,000 से अधिक मृतकों और क़रीब 3 करोड़ प्रभावित आबादी तक पहुँच चुकी है। ये आंकड़े केवल शुरुआत हैं, क्योंकि दूरदराज के इलाकों में वास्तविक स्थिति कहीं अधिक भयावह हो सकती है।

एपी न्यूज़ के अनुसार, लगभग 3 लाख लोग राहत शिविरों में और 20 लाख से अधिक लोग अपने घर व आजीविका छोड़कर सुरक्षित स्थानों पर शरण लेने को मजबूर हुए। इन विस्थापितों के लिए शिविरों में भी जीवन किसी चुनौती से कम नहीं। यहाँ भोजन, स्वच्छ पानी, स्वच्छता और स्वास्थ्य सेवाओं की घोर कमी है।

बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में स्वास्थ्य संकट एक और गंभीर आयाम है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) की रिपोर्ट में बताया गया कि बाढ़ के दो सप्ताह भीतर ही 30 हज़ार से अधिक डायरिया और हैजा के मामले दर्ज हुए। इसके अतिरिक्त, टाइफॉइड, हेपेटाइटिस ई और मलेरिया जैसे जल-जनित रोग तेजी से फैले, जिससे पहले से ही कमज़ोर स्वास्थ्य ढाँचा चरमरा गया। बच्चों और वृद्धों के लिए यह स्थिति विशेष रूप से जानलेवा साबित हुई।

पाकिस्तान की 60% से अधिक जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, और बाढ़ ने इस पर गहरा आघात किया है। सिंध और पंजाब के धान व कपास क्षेत्रों में लगभग 25 लाख हेक्टेयर फसलें नष्ट हो गईं। यह केवल किसानों का नुकसान नहीं, बल्कि देश की समग्र खाद्य सुरक्षा पर मंडराता एक बड़ा संकट है। इससे न केवल स्थानीय स्तर पर भुखमरी का खतरा बढ़ा है, बल्कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर भी भारी बोझ पड़ा है, जो पहले से ही चुनौतियों से जूझ रही है।

जलवायु परिवर्तन का सीधा प्रहार

डब्ल्यूडब्ल्यूए के अध्ययन में स्पष्ट कहा गया कि पाकिस्तान की मौजूदा बाढ़ें केवल एक 'प्राकृतिक घटना' नहीं हैं, बल्कि जलवायु परिवर्तन का प्रत्यक्ष परिणाम हैं। यह इस बात का एक स्पष्ट उदाहरण है कि कैसे मानवजनित गतिविधियाँ वैश्विक मौसम पैटर्न को बदल रही हैं, जिससे संवेदनशील क्षेत्रों में चरम मौसमी घटनाएँ बढ़ रही हैं।

तापमान वृद्धिः दक्षिण एशिया में औसत तापमान पिछले 100 वर्षों में लगभग 1.1C बढ़ चुका है। यह वृद्धि न केवल अत्यधिक गर्मी की लहरों को जन्म देती है, बल्कि वायुमंडल में अधिक नमी धारण करने की क्षमता भी बढ़ाती है। परिणामस्वरूप, जब वर्षा होती है, तो वह पहले की तुलना में अधिक तीव्र और केंद्रित होती है, जिससे अचानक बाढ़ की संभावना बढ़ जाती है।

वर्षा पैटर्न में बदलावः 2025 की मानसून अवधि में पाकिस्तान के उत्तरी और पूर्वी हिस्सों में सामान्य से 40% अधिक वर्षा हुई। लेकिन यह केवल वर्षा की मात्रा नहीं, बल्कि उसके पैटर्न में आया बदलाव है जो अधिक विनाशकारी है। कम समय में अत्यधिक बारिश, विशेषकर पर्वतीय और मैदानी क्षेत्रों में एक साथ, नदियों को उफान पर ला देती है और जल निकासी प्रणालियों को ध्वस्त कर देती है।

हिमनद पिघलना और ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड (जीएलओएफ): कराकोरम और हिमालय की पहाड़ियों से आने वाले ग्लेशियर, जिन्हें अक्सर 'तीसरा ध्रुव' कहा जाता है, वैश्विक तापमान वृद्धि के कारण तेजी से पिघल रहे हैं। इससे ग्लेशियर झीलों का निर्माण होता है और उनके टूटने से 'ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड' (जीएलओएफ) जैसी विनाशकारी घटनाएँ होती हैं, जो मानसून की वर्षा से नदियों में आए पानी को और भी भयावह बना देती हैं। पाकिस्तान का उत्तरी भाग ऐसे खतरों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। पाकिस्तान की भौगोलिक स्थिति इसे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के लिए विशेष रूप से कमजोर बनाती है। यह देश शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में स्थित है, जहाँ जल संसाधनों का प्रबंधन पहले से ही एक

चुनौती है। जलवायु परिवर्तन ने इस चुनौती को और गहरा कर दिया है, जिससे पाकिस्तान 'जलवायु भेद्यता हॉटस्पॉट' बन गया है।

कुप्रबंधन की अंतहीन गाथा

पाकिस्तान के थिंक टैंक जर्नल ने इस आपदा को 'क्लाइमेट कैओस मीट्स ह्यूमन नेगलेक्ट' करार दिया है, जो पाकिस्तान की प्रशासनिक और नीतिगत विफलताओं का सटीक चित्रण है। यह केवल जलवायु परिवर्तन का परिणाम नहीं, बल्कि दशकों के कुप्रबंधन और अदूरदर्शिता का भी फल है।

अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा: पाकिस्तान में दशकों से बाढ़ नियंत्रण के लिए आवश्यक बुनियादी ढाँचे में निवेश की भारी कमी रही है। पुराने बाँध और जलाशय पर्याप्त नहीं हैं, और कई तटबंध (लेवी) जर्जर अवस्था में हैं, जो भारी जलप्रवाह को सहन नहीं कर पाते। जल निकासी प्रणालियाँ अविकसित या अवरुद्ध हैं, जिससे शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में जलभराव की समस्या विकराल रूप ले लेती है। 2022 की बाढ़ के बाद भी इन संरचनाओं को मजबूत करने या नई परियोजनाएँ शुरू करने में अपेक्षित प्रगति नहीं हुई।

प्रशासनिक तैयारी का अभाव: राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एनडीएमए) जैसी एजेंसियों के पास आपदा से निपटने के लिए संसाधनों (मानव और वित्तीय) की भारी कमी रही है। अग्रसक्रिय (प्रोएक्टिव) आपदा प्रबंधन के बजाय, प्रतिक्रियाशील (रिएक्टिव) दृष्टिकोण हावी रहा है। प्रारंभिक चेतावनी प्रणालियाँ (अर्ली वार्निंग सिस्टम) अपर्याप्त हैं और उनका संचार तंत्र भी कमजोर है, जिससे समुदायों को समय पर सूचित कर सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाना मुश्किल हो जाता है। राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव और भ्रष्टाचार भी इन विफलताओं में एक प्रमुख कारक रहे हैं।

अनियोजित शहरी विस्तार: लाहौर, मुल्तान और कराची जैसे प्रमुख शहरों के आसपास अनियोजित निर्माण और अतिक्रमण ने प्राकृतिक जल निकासी मार्गों को अवरुद्ध कर दिया है। नदियों के किनारों और बाढ़ के मैदानों पर अवैध बस्तियाँ बनने से न केवल बाढ़ का खतरा बढ़ा है, बल्कि निकासी और राहत कार्यों में भी बाधा उत्पन्न हुई है। ठोस कचरा प्रबंधन की कमी से जल निकासी प्रणालियाँ जाम हो जाती हैं, जिससे मामूली बारिश भी शहरी बाढ़ का कारण बन जाती है।

अंतरराष्ट्रीय सहायता पर निर्भरता का दुष्चक्र: पाकिस्तान आपदा के बाद हमेशा अंतरराष्ट्रीय सहायता पर निर्भर रहा है। 2022 की बाढ़ के बाद भी संरचनात्मक सुधार और दीर्घकालिक लचीलापन (रेसिलिएंस) विकसित करने के लिए पर्याप्त कदम नहीं उठाए गए, और पाकिस्तान फिर से अंतरराष्ट्रीय राहत पर निर्भर हो गया। यह एक ऐसा दुष्चक्र है जहाँ आपदा के बाद तात्कालिक राहत तो मिलती है, लेकिन मूल कारणों का स्थायी समाधान नहीं होता, जिससे अगली आपदा का मंच तैयार होता रहता है।

भू-राजनीतिक और अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

पाकिस्तान की बाढ़ विभिषिका ने वैश्विक मंच पर जलवायु न्याय और क्षेत्रीय सहयोग के सवालों को फिर से केंद्र में ला दिया है।

लॉस एंड डैमेज फंड: सीओपी28 (दुबई, 2023) में विकासशील देशों को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से होने वाले 'नुकसान और क्षति' की भरपाई के लिए लॉस एंड डैमेज फंड की घोषणा एक महत्वपूर्ण कदम था। पाकिस्तान टुडे के अनुसार, पाकिस्तान अब इस फंड से 5 अरब डॉलर की सहायता का दावा कर रहा है। यह फंड उन देशों के लिए उम्मीद की किरण है जो ऐतिहासिक रूप से कम उत्सर्जन के बावजूद जलवायु परिवर्तन के सबसे बुरे परिणामों को भुगत रहे हैं। हालांकि, इस फंड का वास्तविक वितरण, इसकी पारदर्शिता और पर्याप्तता अभी भी सवालों के घेरे में है। जलवायु न्याय की अवधारणा तब तक अधूरी रहेगी जब तक विकसित देश अपनी ऐतिहासिक ज़िम्मेदारी को स्वीकार कर उचित फंडिंग प्रदान नहीं करते।

भारत-पाक जल संबंध और सिंधु जल संधि: सिंधु जल संधि (1960) के तहत भारत और पाकिस्तान के बीच नदियों के पानी का बँटवारा तय है। यह संधि दशकों से दोनों देशों के बीच तनाव के बावजूद पानी के प्रबंधन में एक स्थिर ढाँचा प्रदान करती रही है। लेकिन बढ़ते जलवायु दबाव ने इस संधि की सीमाओं को उजागर कर दिया है। यह संधि मुख्य रूप से पानी के बँटवारे पर केंद्रित है, न कि बाढ़ प्रबंधन या अत्यधिक जल प्रवाह के समन्वित निपटान पर। जब ग्लेशियर पिघलते हैं और मानसून चरम पर होता है, तो दोनों देशों को एक साझा और समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है, जो मौजूदा संधि में पूरी तरह से परिलक्षित नहीं होता।

क्षेत्रीय अस्थिरता: जलवायु आपदाएँ आंतरिक विस्थापन, खाद्य असुरक्षा और आर्थिक संकट को जन्म देती हैं, जो बदले में सामाजिक अशांति और भू-राजनीतिक अस्थिरता को बढ़ावा दे सकती हैं। पाकिस्तान जैसे परमाणु शक्ति संपन्न देश में ऐसी स्थिति के क्षेत्रीय

और वैश्विक निहितार्थ हो सकते हैं, जिससे सुरक्षा चुनौतियाँ और बढ़ सकती हैं।

रावी का रोना

पाकिस्तान की बाढ़ का प्रभाव सीमाओं के पार भारत तक फैला, विशेष रूप से रावी नदी के उफान ने साझा संकट की भयावह तस्वीर पेश की।

पंजाब (भारत) पर असरः अगस्त 2025 में रावी नदी के उफान से गुरदासपुर और पठानकोट जिले सबसे अधिक प्रभावित हुए। पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में आई बाढ़ का असर भारतीय पंजाब के निचले इलाकों तक पहुँचा, जिससे स्पष्ट हो गया कि नदियाँ कोई सीमा नहीं मानतीं।

विस्थापन और क्षतिः पंजाब सरकार के आँकड़ों के अनुसार, 70 से अधिक गाँव खाली कराए गए और लगभग 50,000 लोग अस्थायी शिविरों में शरण लेने को मजबूर हुए। ठीक पाकिस्तान की तरह, यहाँ भी लोगों ने अपनी ज़मीन, घर और आजीविका खो दी। बाढ़ ने 10,000 हेक्टेयर से अधिक धान और मक्का की फसल को नुकसान पहुँचाया, जिससे भारतीय किसानों को भी भारी आर्थिक चोट पहुँची।

अवसंरचना का टूटनाः सीमा पर स्थित सड़क और पुलों का संपर्क टूट गया, जिससे न केवल स्थानीय आवागमन बाधित हुआ, बल्कि राहत और बचाव कार्यों में भी अड़चनें आईं। यह दोनों देशों के लिए एक समान चुनौती थी।

संयुक्त चुनौती, राजनीतिक दीवारेंः भारत और पाकिस्तान, दोनों देशों के किसानों, व्यापारियों और सीमा समुदायों पर इस साझा आपदा का गहरा असर हुआ। लोगों की पीड़ा समान थी, लेकिन राजनीतिक तनाव ने किसी संयुक्त राहत प्रयास की संभावना को लगभग समाप्त कर दिया। ऐसी स्थिति में मानवीय संकट को भी भू-राजनीतिक चश्मे से देखा जाता है, जो त्रासदी को और गहरा करता है और प्रभावी समाधानों में बाधा डालता है। यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि जब तक क्षेत्रीय सहयोग नहीं होगा, जलवायु परिवर्तन से प्रभावी ढंग से निपटना असंभव है।

अदृश्य घाव और टूटती उम्मीदें

बाढ़ केवल भौतिक तबाही नहीं लाती, बल्कि समाज के ताने-बाने को भी तोड़ देती है और गहरे मनोवैज्ञानिक घाव छोड़ जाती है। लोगों की गवाहियाँ अक्सर आँकड़ों से ज़्यादा मार्मिक होती हैं। गार्जियन ने एक महिला का उद्धरण प्रकाशित कियाः 'पानी सब कुछ ले गया—घर, फसलें, और हमारे बच्चों की किताबें तक। अब हम किस सहारे जिएँगे?' यह एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि लाखों लोगों की कहानी है जिनकी उम्मीदें पानी में बह गईं।

महिलाएँ और बच्चे सबसे अधिक प्रभावितः लगभग 60% विस्थापितों में महिलाएँ और बच्चे शामिल हैं। उनके लिए स्वास्थ्य सेवाएँ, सुरक्षित आश्रय और शिक्षा की व्यवस्था लगभग ठप हो गई है। राहत शिविरों में महिलाओं को स्वच्छता, सुरक्षा और गरिमा संबंधी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। बच्चों की शिक्षा बाधित होती है, और कुपोषण तथा बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। मनोवैज्ञानिक आघात, डर और अनिश्चितता उनके भविष्य पर गहरी छाप छोड़ते हैं।

सीमा पार कठिनाई और साझा पीड़ाः भारत और पाकिस्तान के सीमावर्ती गाँवों में समान पीड़ा है। दोनों तरफ के लोग अपने घर, खेत और भविष्य खो चुके हैं। लेकिन विभाजित राजनीति इन्हें जोड़ने के बजाय अलग करती है। सीमा पार मानवीय सहायता, डेटा साझाकरण या संयुक्त निगरानी जैसे कदम शायद हजारों जिंदगियां बचा सकते थे, लेकिन राजनीतिक अड़चनों ने इसे असंभव बना दिया। यह मानवीय भावना और सहयोग की आवश्यकता पर एक दुखद टिप्पणी है।

भविष्य की राह

पाकिस्तान की मौजूदा बाढ़ ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भविष्य की आपदाओं से निपटने के लिए बहुआयामी और समन्वित दृष्टिकोण आवश्यक है।

क्षेत्रीय जल प्रबंधन तंत्रः भारत और पाकिस्तान को सिंधु जल संधि की सीमाओं से आगे बढ़कर जलवायु-आधारित साझा जल प्रबंधन तंत्र विकसित करना चाहिए। इसमें रियल-टाइम डेटा साझाकरण, संयुक्त बाढ़ पूर्वानुमान मॉडल विकसित करना, और दोनों देशों के बीच नदियों के ऊपरी और निचले हिस्सों में बाँधों व जलाशयों के समन्वित संचालन पर चर्चा शामिल होनी चाहिए। संयुक्त नदी बेसिन आयोगों का गठन इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है।

अंतरराष्ट्रीय सहयोग और जलवायु न्यायः लॉस एंड डैमेज फंड को केवल घोषणा नहीं, बल्कि अनिवार्य और पर्याप्त वितरण की दिशा में ले जाना होगा। विकसित देशों को अपनी जलवायु संबंधी ज़िम्मेदारियों को गंभीरता से लेना चाहिए और विकासशील देशों को अनुकूलन (एडैप्टेशन) और शमन (मिटिगेशन) प्रयासों के लिए प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और वित्तीय सहायता प्रदान करनी चाहिए।

तकनीक ही बनेगा तारनहार

संजय श्रीवास्तव

क्या बादल फटने की आपदा पर किसी का वश नहीं है, कुदरत के इस कहर के आगे सब बेबस हैं और बचाव में कुछ किया ही नहीं जा सकता इसलिए हम केवल आपदा के बाद राहत बाँटने तक सीमित रहेंगे, सच यह है कि विज्ञान और नव्यतम तकनीक के पास इसके नुकसान को न्यून करने, भविष्य सुरक्षित करने का रास्ता है और यही एकमात्र मार्ग है

मानसून में पहाड़ी राज्यों से बादल फटने की खबरें आम हैं। इस आपदा के कई आशंकित क्षेत्र हैं—जैसे पश्चिमी घाट के कुछ हिस्से जैसे केरल, महाराष्ट्र और कभी-कभी झारखंड वगैरह परंतु उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर और लद्दाख में ये घटनाएँ लगभग हर मानसून में नियमित हैं। उत्तर-पूर्वी भारत के अरुणाचल प्रदेश, मेघालय और नागालैंड भी अकसर इससे बुरी तरह प्रभावित होते हैं। दूसरे देश भी इस कुदरती कहर से अछूते नहीं हैं—पाकिस्तान, नेपाल, चीन, अफगानिस्तान और जापान में भी अक्सर ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं। पाकिस्तान का बुनेर और अफगानिस्तान का खैबर पख्तूनवां हालिया तौर पर इससे परेशान हैं। यूरोप या अमेरिका में घटनाएँ भले कम होती हों, पर वे भी कभी-कभार इसके शिकार बनते हैं। बादल फटने की घटनाएँ भारत जितनी आम हैं, उतनी कहीं नहीं, खासकर हिमालयी क्षेत्रों में।

राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण के आँकड़ों के अनुसार, पिछले एक

दशक में केवल उत्तराखंड और हिमाचल में ही 150 से अधिक बादल फटने की बड़ी विनाशक घटनाएँ दर्ज की जा चुकी हैं। इनमें कभी पूरी बिजली परियोजना बह गई तो कभी सैकड़ों घर, समूचे गाँव, होटल, सड़कें, पुल-पुलिया, पेड़ और सैकड़ों लोग भी। इस संदर्भ में भविष्य और भयावह दिखता है क्योंकि, एक तो यहाँ बादल फटने और फ्लैश फ्लड के बाद नुकसान बढ़ाने वाले कारक अन्य जगहों की तुलना में अधिक हैं; दूसरे, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ डिज़ास्टर रिस्क रिडक्शन का निष्कर्ष है कि हर साल इन घटनाओं की आवृत्ति और विनाशक क्षमता बढ़ती जा रही है।

एक तो बादल फटना अत्यंत आकस्मिक और अत्यधिक स्थानीय घटना है जिस पर किसी का वश नहीं दूसरे छोटे भौगोलिक क्षेत्र में मौसम का सटीक पूर्वानुमान कठिन है। लेकिन इसका अर्थ यह कतई नहीं कि कुदरत के इस कहर के आगे सब बेबस हैं और बचाव में कुछ किया ही नहीं जा सकता। सच यह है कि विज्ञान और तकनीक की मदद तथा सरकार और जन-प्रयासों से, भले इसे पूरी तरह रोका न जा सके, लेकिन क्षति को अत्यधिक न्यून तो अवश्य किया जा सकता है। निस्संदेह भविष्य में बादल फटने जैसी आपदा से निपटने का एकमात्र भरोसेमंद उपाय नई तकनीक का विकास और उसका सही उपयोग ही होगा। रडार प्रणाली, सूचना-संचार प्रौद्योगिकी, उपग्रह, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, विभिन्न प्रकार के सेंसर, सैटेलाइट इमेजिंग और क्लाउड कंप्यूटिंग जैसी तकनीक इस क्षेत्र में तबाही से बचाव की मजबूत ढाल बन सकती हैं।

जब जुलाई से सितंबर के बीच हिमालयी क्षेत्रों में ऐसी घटनाओं की आशंका तय शुदा मानी जाती है; जब यह तथ्य स्थापित है कि इस दौरान लगभग 70 प्रतिशत बादल फटने की घटनाएँ समुद्र तल से 1000–2000 मीटर ऊँचाई वाले इलाकों में होती हैं; और जब यह भी स्पष्ट है कि कम मानसूनी वर्षा वाले क्षेत्रों में भीषण बारिश और बादल फटने की घटनाएँ अधिक होती हैं; साथ ही नमी, ताप और वर्षा के समीकरणों का संबंध भी हम पहचान ही चुके हैं—तो फिर इन सबके पैटर्न और प्रभावित इलाकों का विश्लेषण कर आशंकित स्थानों को पहले से चिह्नित करना बहुत कठिन नहीं है। यदि ऐसे आशंकाग्रस्त स्थानों को पहचान कर वहां पहले से सचेत रहा जा सके तो आपदा से पहले और बाद में होने वाले नुकसान को न्यूनतम किया जा सकता है।

बेशक बादल फटने की घटना का घंटों पहले पूर्वानुमान और लंबी अवधि की चेतावनी संभव नहीं है। फिर भी, आधुनिक रडार और सैटेलाइट तकनीक की मदद से एक-दो घंटे पहले इसकी आशंका का भान हो सकता है। हमारे पास उन्नत डॉप्लर वेदर रडार और इसरो के कई मौसम उपग्रह मौजूद हैं, जो भारी वर्षा और बादल बनने की स्थिति का पता लगाने में सक्षम हैं। इनके उच्च-रिज़ॉल्यूशन इमेजरी से छोटे पैमाने पर बादलों की गतिविधि पर नजर रखते हैं। किस क्षेत्र में बादल फटने की आशंका है, इसका अनुमान लगाते हैं. और इन सबके विवेचन से कुछ घंटे पहले ही खतरे की चेतावनी देकर लोगों को आपदास्थल से सुरक्षित निकाला जा सकता है। भारी वर्षा के पैटर्न, नमी और तापमान के रीयल-टाइम डेटा को कृत्रिम बुद्धिमत्ता यानी एआई आधारित मॉडल अधिक सटीकता से मिनट-दर-मिनट दर्ज कर सकते हैं। इन आँकड़ों के विश्लेषण से संभावित खतरे का तत्काल पता लगाया जा सकता है। क्लाउड कंप्यूटिंग आधारित डेटा प्रोसेसिंग से तुरंत निर्णय लेने में बड़ी मदद मिलती है। अगर आशंकाग्रस्त हिमालयी क्षेत्रों के गाँव-गाँव में स्वचालित रेन-गेज नेटवर्क स्थापित किए जाएं, जिनमें ऐसे सेंसर हों जो वर्षा का डेटा तुरंत केंद्रीय सर्वर को भेजें, तो स्थानीय स्तर पर चेतावनी जारी करने की क्षमता बढ़ेगी। ड्रोन के जरिये जीआईएस मैपिंग करवा कर मानसून से पहले ही खतरे वाले गाँवों को चिह्नित किया जा सकता है। इन्हीं से संवेदनशील ढलानों और नदियों के किनारों की बसावट, मोड़ और अवरोध का नक्शा तैयार किया जा सकता है, जिससे फ्लैश फ्लड आने से पहले आगत समस्या का समाधान तलाशा जा सके। एआई और संचार तकनीक के इस युग में आसान है कि आशंकाग्रस्त क्षेत्रों में साइरन सिस्टम के अलावा ऐसे सामुदायिक रेडियो और मोबाइल ऐप विकसित किए जाएँ, जो स्थानीय बोली-भाषा में चेतावनी प्रसारित करें।

भारत के पास मौसम विज्ञान के क्षेत्र में पर्याप्त आधारभूत ढाँचा और तकनीक है। 37 डॉप्लर रडार हैं, बादलों की गति और नमी का रीयल-टाइम डेटा देने के लिए इसरो के उपग्रह हैं। 2 से 6 घंटे पहले "नाउकास्टिंग" के जरिये अप्रत्याशित भारी वर्षा की चेतावनी दी जा सकती है। मोबाइल, रेडियो, टीवी और इंटरनेट के जरिए सूचना प्रसारण की व्यवस्था भी है। फिर भी, 2021 में उत्तराखंड के रैनी हादसे के दौरान तकनीकी निगरानी के बावजूद विद्युत आपूर्ति बाधा के चलते अलर्ट गाँवों तक नहीं पहुँचा। 2023 में हिमाचल के किन्नौर में बादल फटा तो वहाँ डॉप्लर रडार ही मौजूद नहीं था। जम्मू के किश्तवाड़ और कठुआ में मोबाइल नेटवर्क बाधित होने से अलर्ट का लाभ नहीं मिल पाया। ये घटनाएँ बताती हैं कि तकनीकी साधनों का होना और उनका कुशलता के साथ उचित प्रयोग—दो अलग बातें हैं। हिमालयी राज्यों में डॉप्लर रडार लगाने की सरकारी योजना के बावजूद यहां कवरेज अत्यंत कम है। छोटे-छोटे अंतराल पर डॉप्लर रडार लगाने की आवश्यकता है। मिनी-रडार और पोर्टेबल रडार तकनीक से दूरदराज़ क्षेत्रों को भी कवर किया जा सकता है। वैसे भी केवल पारंपरिक रडार और उपग्रह पर्याप्त नहीं। उन्नत तकनीक की ओर बढ़ना होगा—जैसे आपदा में बिजली गुल होने पर मोबाइल अलर्ट न रुके, इसके लिए सैटेलाइट-आधारित संचार का विकल्प देना होगा।

शांति का मायाजाल

अलास्का में ट्रंप-पुतिन की मुलाकात, शांति का भ्रम या रणनीतिक चाल है? ट्रंप की जल्दबाजी भरी कूटनीति और पुतिन की धैर्यवान रणनीति ने यूक्रेन युद्ध में एक नया अध्याय खोला है। यह विश्लेषण बताता है कि कैसे यह 'शांति का मायाजाल' असल में रूस के लक्ष्यों को साध रहा है, जबकि संघर्ष के मूल मुद्दे जस के तस बने हुए हैं।

अनवर हुसैन

15 अगस्त 2025 में अलास्का की ठंडी हवाओं और वाशिंगटन डीसी के सत्ता के गलियारों में जो हुआ, वह पारंपरिक कूटनीति नहीं थी; वह एक रूप से रचा गया प्रदर्शन था। गोपनीयता के पर्दे में लिपटी, डोनाल्ड ट्रंप और व्लादिमीर पुतिन के बीच हुई शिखर वार्ताओं ने एक ऐसी शांति प्रक्रिया का भ्रम पैदा किया, जो वास्तविकता से कोसों दूर थी। ट्रंप की अति-महत्वाकांक्षी 'शटल डिप्लोमेसी', जो उनकी व्यक्तिगत विरासत और नोबेल शांति पुरस्कार की चाह से प्रेरित थी, ने एक ऐसी कूटनीतिक मृगतृष्णा को जन्म दिया है, जिसने संघर्ष के मूल मुद्दों को सुलझाने के बजाय व्लादिमीर पुतिन के दीर्घकालिक रणनीतिक लक्ष्यों को ही साधा है। यह विश्लेषण इस बात की पड़ताल करता है कि कैसे ट्रंप की लेन-देन वाली शैली, पुतिन की धैर्यवान रणनीति और ज़ेलेंस्की की विवश स्थिति ने मिलकर एक ऐसे जटिल समीकरण का निर्माण किया है, जहाँ शांति की बातें तो हो रही हैं, लेकिन युद्ध के लंबी खींचने के आसार और भी प्रबल हो गए हैं। यह केवल दो राष्ट्रपतियों की बैठक नहीं, बल्कि एक सौदागर, एक रणनीतिकार और एक उत्तरजीवी के बीच खेला जा रहा एक उच्च-स्तरीय भू-राजनीतिक खेल है।

सौदागर बनाम रणनीतिकार

इस कूटनीतिक नाटक के केंद्र में दो बिल्कुल भिन्न विश्वदृष्टि और कार्यशैली वाले नेता हैं, और यही असमानता इस प्रक्रिया के परिणामों को आकार दे रही है।

डोनाल्ड ट्रंप: सौदागर राष्ट्रपति

ट्रंप के लिए यूक्रेन युद्ध एक जटिल ऐतिहासिक और राष्ट्रीय अस्तित्व का संघर्ष नहीं, बल्कि एक अचल संपत्ति का सौदा है, जिसे सही कीमत पर बंद किया जा सकता है। उनकी कूटनीति लेन-देन पर आधारित है, जहाँ हर चीज़ की एक कीमत होती है। उनका लक्ष्य एक त्वरित, ठोस और सुर्खियाँ बटोरने वाला 'शांति समझौता' है, जिसे वे 10 अक्टूबर को नोबेल पुरस्कारों

की घोषणा से पहले अपनी सबसे बड़ी उपलब्धि के रूप में प्रस्तुत कर सकें। उनकी भाषा 'सौदा,' 'समझौता,' और 'तालमेल' जैसी शब्दावली से भरी है। उन्होंने संघर्ष के सबसे जटिल मुद्दे—'ज़मीन' और 'सुरक्षा'—को सरलीकृत कर दिया है, मानो यह दो कंपनियों के बीच संपत्ति के बंटवारे का मामला हो। उनका अचानक युद्धविराम से हटकर शांति समझौते पर जोर देना इसी जल्दबाजी का प्रतीक है। वे एक ऐसा परिणाम चाहते हैं जिसे वे बेच सकें, भले ही उसकी नींव कितनी भी कमजोर क्यों न हो।

व्लादिमीर पुतिन: धैर्यवान रणनीतिकार

दूसरी ओर, व्लादिमीर पुतिन एक शतरंज के खिलाड़ी की तरह काम कर रहे हैं जो कई चालें आगे की सोचता है। वे ट्रंप की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं और उनकी अधीरता को बखूबी समझते हैं और इसे अपने लाभ के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। पुतिन के लिए समय कोई बाधा नहीं है; उनके पास न तो कोई चुनावी दबाव है और न ही देश में किसी महत्वपूर्ण विरोध का सामना करना पड़ रहा है। वे जानते हैं कि ट्रंप का कार्यकाल रूस के लिए एक 'जीवन में एक बार मिलने वाला अवसर' है, ताकि वे अमेरिका के साथ संबंधों को अपनी शर्तों पर फिर से स्थापित कर सकें। इसलिए, वे ट्रंप को व्यस्त रखने और उन्हें 'जीत' का एहसास दिलाने के लिए छोटी, प्रतिवर्ती रियायतें दे रहे हैं—जैसे आर्कटिक में संयुक्त परियोजनाओं की पेशकश या एक्सन मोबिल को सखालिन-1 परियोजना में लौटने की अनुमति देना। ये कम लागत वाले निवेश हैं, जिनके बदले में वे एक बहुत बड़ा पुरस्कार चाहते हैं: यूक्रेन पर रूसी प्रभुत्व की अमेरिकी स्वीकृति और नए प्रतिबंधों से बचाव, जिसमें वे पहले ही सफल हो चुके हैं।

यह असंतुलन—ट्रंप की तात्कालिकता बनाम पुतिन का धैर्य—ही इस पूरी प्रक्रिया की धुरी है, जिसे पुतिन बड़ी कुशलता से अपने पक्ष में मोड़ रहे हैं।

दो असंभव समीकरण

ट्रंप की कूटनीति दो ऐसे स्तंभों पर टिकी है जो अपनी प्रकृति में ही विरोधाभासी हैं: 'ज़मीन की अदला-बदली' और 'सुरक्षा की गारंटी'। दोनों पक्षों के लिए इन शब्दों के अर्थ इतने भिन्न हैं कि कोई भी मध्य मार्ग लगभग असंभव है।

अमेरिका के विशेष दूत स्टीव विटकॉफ ने इसे 'सौदे का केंद्र बिंदु' कहा है, लेकिन यह एक साधारण लेन-देन नहीं है। यूक्रेन के लिए, लुहांस्क, डोनेत्स्क, ज़ाफ़ोरज़िशिया, खेरसन और क्रीमिया केवल ज़मीन के टुकड़े नहीं, बल्कि राष्ट्रीय संप्रभुता, पहचान और हजारों कुर्बानियों का प्रतीक हैं। इन क्षेत्रों को रूस को सौंपना राष्ट्रपति ज़ेलेंस्की के लिए राजनीतिक आत्महत्या होगी और यह उस राष्ट्रीय संकल्प के साथ विश्वासघात होगा जिसने दो साल से अधिक समय तक रूसी आक्रमण का सामना किया है। यूक्रेन का संविधान भी ऐसे किसी भी हस्तांतरण को लगभग असंभव बना देता है।

रूस के लिए, ये क्षेत्र रणनीतिक संपत्ति और सौदेबाजी के हथियार हैं। पुतिन ने इन क्षेत्रों को अपने संविधान का हिस्सा बनाकर अपनी स्थिति

को और भी कठोर कर लिया है। वे युद्ध के मैदान में अपनी बढ़त का उपयोग यूक्रेन पर दबाव बनाने के लिए कर रहे हैं, यह संकेत देते हुए कि यदि कीव उनकी शर्तों को स्वीकार नहीं करता है, तो उसे और अधिक क्षेत्र खोना पड़ेगा। इस प्रकार, 'ज़मीन' एक ऐसा मुद्दा है जहाँ दोनों पक्षों के लिए कोई लचीलापन नहीं है, जिससे यह शांति की राह में सबसे बड़ा रोड़ा बन गया है।

सुरक्षा की गारंटी

यह दूसरा स्तंभ भी उतना ही अस्थिर है। जब यूक्रेन और यूरोप 'सुरक्षा की गारंटी' की बात करते हैं, तो उनका मतलब 'नाटो की धारा 5 जैसा संरक्षण' होता है—एक विश्वसनीय सैन्य प्रतिबद्धता कि भविष्य में रूसी आक्रमण का सामना सामूहिक रूप से किया जाएगा। इसके बिना, कोई भी शांति समझौता केवल एक अस्थायी युद्धविराम होगा।

लेकिन पुतिन के लिए 'सुरक्षा की गारंटी' का अर्थ ठीक इसके विपरीत है: यूक्रेन का पूर्ण विसैन्यीकरण और उसकी स्थायी तटस्थता। वे एक ऐसा यूक्रेन चाहते हैं जो कभी भी पश्चिमी गठबंधनों में शामिल न हो सके और रूस के लिए कोई खतरा न बने। इस संदर्भ में, ट्रंप का दृष्टिकोण बेहद अस्पष्ट और अप्रभावी है। वे यूक्रेन को हथियार बेचने की बात तो करते हैं, लेकिन अमेरिकी सैनिकों की तैनाती से इनकार करते हैं। यह स्थिति न तो यूक्रेन को वास्तविक सुरक्षा प्रदान करती है और न ही यह पुतिन को स्वीकार्य है, क्योंकि यह यूक्रेन को सैन्य रूप से सक्षम बनाए रखती है।

इस प्रकार, ट्रंप की कूटनीति इन दो मूलभूत रूप से असंगत अवधारणाओं के बीच फंसी हुई है, जिससे कोई भी सार्थक प्रगति असंभव हो जाती है।

प्रदर्शन की कीमत

इस कूटनीतिक प्रदर्शन का सबसे बड़ा लाभार्थी रूस रहा है। पुतिन ने बिना कोई बड़ी रणनीतिक रियायत दिए कई महत्वपूर्ण लाभ हासिल किए हैं:

1. अंतर्राष्ट्रीय अलगाव का टूटना: एक अमेरिकी राष्ट्रपति के साथ उच्च-स्तरीय शिखर वार्ता ने पुतिन को वैश्विक मंच पर फिर से एक प्रमुख खिलाड़ी के रूप में स्थापित कर दिया है, जिससे पश्चिम द्वारा उन्हें अलग-थलग करने की कोशिशें कमजोर हुई हैं।

2. वार्ता की शर्तों को बदलना: पुतिन ने सफलतापूर्वक विमर्श को यूक्रेन की मांग (तत्काल युद्धविराम और रूसी सैनिकों की वापसी) से हटाकर अपनी पसंद (एक व्यापक शांति समझौता जो रूस के क्षेत्रीय लाभ को वैध बनाता है) पर केंद्रित कर दिया है।

3.पश्चिमी एकता में दरार: ट्रंप का एकतरफा दृष्टिकोण यूरोपीय सहयोगियों को हाशिए पर डालता है, जिनका इस संघर्ष में अमेरिका से कहीं अधिक सीधा दांव लगा है। यह पश्चिमी गठबंधन में दरार पैदा करता

है, जो हमेशा से पुतिन का एक प्रमुख लक्ष्य रहा है।

यह पूरी प्रक्रिया एक ऐसी स्थिति का निर्माण कर रही है जहाँ ज़ेलेंस्की पर एक असंभव शांति समझौते के लिए दबाव बढ़ रहा है, जबकि पुतिन को अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए और समय मिल रहा है।

निष्कर्ष

डोनाल्ड ट्रंप की यूक्रेन में 'शटल डिप्लोमेसी' एक साहसिक और महत्वाकांक्षी प्रयास हो सकती है, लेकिन यह एक गहरी त्रुटिपूर्ण नींव पर आधारित है। यह संघर्ष की ऐतिहासिक जटिलताओं को नजरअंदाज करती है, प्रमुख खिलाड़ियों की मौलिक रूप से भिन्न प्रेरणाओं को समझने में विफल रहती है, और एक त्वरित व्यक्तिगत जीत के लिए दीर्घकालिक स्थिरता का त्याग करती है।

रूस और यूक्रेन के बीच के मूलभूत मतभेद इतने गहरे हैं कि उन्हें किसी शिखर सम्मेलन के करिश्मे से हल नहीं किया जा सकता। न तो अमेरिका और यूरोप के पास रूस को अपनी शर्तें मानने के लिए मजबूर करने का पर्याप्त दबाव है, और न ही रूस यूक्रेन को झुकाने में पूरी तरह से सफल हो पाया है।

रूस और यूक्रेन के बीच के मूलभूत मतभेद इतने गहरे हैं कि उन्हें किसी शिखर सम्मेलन के करिश्मे से हल नहीं किया जा सकता। न तो अमेरिका और यूरोप के पास रूस को अपनी शर्तें मानने के लिए मजबूर करने का पर्याप्त दबाव है, और न ही रूस यूक्रेन को झुकाने में पूरी तरह से सफल हो पाया है। इस गतिरोध के बीच, ट्रंप की कूटनीति एक कूटनीतिक धुंध पैदा कर रही है, जो इस कठोर वास्तविकता को छिपाती है कि यह युद्ध एक लंबी और थका देने वाली लड़ाई होने के लिए अभिशप्त है। शांति की कोई भी उम्मीद, जब तक कि वह ज़मीन पर मौजूद वास्तविकताओं पर आधारित न हो, एक मृगतृष्णा ही साबित होगी—एक ऐसा मायाजाल जो एक नेता की विरासत की भूख और दूसरे की रणनीतिक चालाकी से बुना गया है।

दमिश्क से कंधार तक
बदलाव या दोहराव ?

संतु दास

सीरिया की राजधानी दमिश्क पर बशर अल-असद के तीन दशक लंबे शासन का अंत, एक भू-राजनीतिक भूचाल है। हयात तहरीर अल-शाम (एचटीएस) के अहमद अल-शारा, जो कभी अल-कायदा से जुड़े थे, अब एकमात्र पावर एजेंट के रूप में उभरे हैं। विडंबना देखिए, पश्चिम और अरब देश, जिन्होंने एचटीएस को आतंकवादी संगठन घोषित किया था, अब उन्हें 'बदलाव का अग्रदूत' मान रहे हैं। यह तीव्र उदय और वैश्विक समर्थन सिर्फ सीरियाई स्थिरता का मामला नहीं, बल्कि गहरे भू-राजनीतिक समीकरणों का हिस्सा है। अल-शारा का यह उभार, हमें अफगानिस्तान के तालिबान की याद दिलाता है, जहाँ बाहरी हस्तक्षेप ने केवल एक समस्याग्रस्त शासन को दूसरे, समान रूप से समस्याग्रस्त संस्करण से बदल दिया। यह पैटर्न क्षेत्रीय संघर्षों में वैश्विक शक्तियों की सीमाओं और वैचारिक चरमपंथ के नए रूपों में उभरने की चेतावनी है।

अल-शारा का सत्ता में आना, उन्हें जिहादी पृष्ठभूमि वाले दूसरे ऐसे नेता के रूप में स्थापित करता है, जिसने एक प्रमुख राज्य पर कब्जा किया है। इसकी तुलना सीधे अफगानिस्तान से की जा सकती है, जहाँ दो दशक के अमेरिकी हस्तक्षेप के बाद भी, वाशिंगटन और उसके सहयोगी मुल्ला उमर के तालिबान को अखुंदजादा के नए तालिबान से बदलने में ही सफल रहे हैं। यह एक सतही बदलाव था, जहाँ मूल समस्याएँ—वैचारिक चरमपंथ और अस्थिरता—कायम रहीं। यह दर्शाता है कि जटिल क्षेत्रीय संघर्षों को हल करने में वैश्विक शक्तियों का हस्तक्षेप अक्सर दोहराव की ओर ले जाता है, जहाँ एक पुराना राक्षस बस एक नए मुखौटे में लौट आता है। यह सीरिया के लिए एक गंभीर चेतावनी है, जहाँ अल-शारा के शासन के तहत भी वैचारिक जड़ें गहराई तक जमी हुई हैं।

असद परिवार के पलायन और अल-शारा के निर्विरोध प्रवेश ने सीरिया में एक तात्कालिक उत्साह पैदा किया। सीरियाई लोग दशकों के उत्पीड़न के अंत को देख रहे हैं, भले ही यह मुक्ति अल-कायदा पृष्ठभूमि वाले नेता द्वारा लाई गई हो। लोगों के लिए, फिलहाल, मुक्ति की भावना नैतिक विरोधाभासों से अधिक प्रबल है।

इस घटनाक्रम का दूसरा और अधिक महत्वपूर्ण पहलू, ईरान और रूस का सीरियाई राजनीतिक मंच से बाहर निकलना था। इन दोनों शक्तियों ने असद को स्थिर रखने में सैन्य और राजनीतिक रूप से भारी निवेश किया था, और यह उनके लिए एक बड़ा रणनीतिक झटका है। हालांकि, रूस अभी भी पूरी तरह से सीरिया से किनारा नहीं किया है, जैसा कि सीरिया के नए विदेश मंत्री, असद अल-शैबानी की मास्को यात्रा और राष्ट्रपति पुतिन से उनकी मुलाकात से स्पष्ट है। यह दर्शाता है कि रूस अभी भी सीरिया में अपनी पकड़ बनाए रखने या कम से कम अपने हितों की रक्षा करने का प्रयास कर रहा है।

अल-शारा के लिए चुनौती केवल आंतरिक स्थिरता बनाए रखना नहीं है, बल्कि सीरिया को बड़ी शक्तियों की प्रतिस्पर्धा का अखाड़ा बनने से बचाना है, जैसा कि इराक ईरानी और अमेरिकी हितों के बीच सत्ता-संघर्ष में उलझा हुआ है। इराक की त्रासदी एक चेतावनी है कि कैसे बाहरी शक्तियों की खींचतान एक देश को स्थायी अस्थिरता में धकेल सकती है। मास्को और संभवतः तेहरान के साथ संपर्क स्थापित करना अल-शारा की भू-राजनीतिक संतुलन साधने की रणनीति का हिस्सा हो सकता है। उन्हें पश्चिम, अरब देशों,

रूस और ईरान के बीच एक नाजुक मध्य मार्ग खोजना होगा, ताकि सीरियाई संप्रभुता कायम रहे और लोगों को वास्तविक स्थिरता मिले। यह एक उच्च दांव वाला खेल है, जहाँ गलती की गुंजाइश कम है।

नए सीरियाई शासन ने तालिबान को भी एक प्रेरणा स्रोत के रूप में देखा है। अगस्त 2021 में, एचटीएस के कैडर इदलिब की सड़कों पर तालिबान का झंडा लहरा रहे थे और अफगानिस्तान में उनकी अमेरिका पर जीत का जश्न मना रहे थे। एचटीएस के आधिकारिक बयान में तालिबान की जीत को 'स्पष्ट विजय और महान जीत' बताया गया, और सीरियाई प्रतिरोध ने 'प्रतिरोध और जिहाद' के ऐसे उदाहरणों से प्रेरणा लेने की बात कही। यह दर्शाता है कि जिहादी विचारधाराओं में अभी भी एक-दूसरे से प्रेरणा लेने और एक साझा संघर्ष की भावना विकसित करने की क्षमता है।

अफगानिस्तान में तालिबान, अखुंदजादा के तहत कंधार में वैचारिक केंद्र और काबुल में राजनीतिक वर्ग (जिसमें सिराजुद्दीन हक्कानी के नेतृत्व वाला हक्कानी नेटवर्क शामिल है) के बीच आंतरिक तनाव के बावजूद, जमीन पर रियायत दिए बिना जीवित रहा है। उन्होंने 2021 और 2024 के बीच 80 देशों के साथ 1,382 राजनयिक जुड़ावों की सार्वजनिक रूप से घोषणा की है। चीन तालिबान का मुख्य भू-राजनीतिक एंकर बन गया है, जिसके बाद ईरान और तुर्की हैं। यह चीन की बढ़ती वैश्विक महत्वाकांक्षाओं और अमेरिकी प्रभाव के क्षरण का संकेत है।

इसकी तुलना में, अल-शारा के तहत सीरिया ने अब तक 1,500 से अधिक सार्वजनिक रूप से स्वीकार किए गए राजनयिक जुड़ाव किए हैं, जिसमें तुर्की और कतर अग्रणी हैं। यह संख्यात्मक समानता दर्शाती है कि दोनों समूहों में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ जुड़ने की इच्छा और क्षमता है, भले ही उनकी उत्पत्ति और अंतर्राष्ट्रीय स्वीकृति का स्तर भिन्न हो।

तालिबान का अपने पड़ोसियों के साथ क्षेत्रीय दृष्टिकोण कठिन, लेकिन लाभदायक रहा है। मध्य एशियाई राज्यों ने टकराव के बजाय अपनी सीमाओं की सुरक्षा और आर्थिक हितों के बदले तालिबान के साथ जुड़ना पसंद किया। यह दर्शाता है कि सुरक्षा और आर्थिक हित अक्सर वैचारिक मतभेदों पर हावी हो सकते हैं।

पाकिस्तान के साथ तालिबान का संबंध खंडित रहा है। डूरंड रेखा पर लंबे समय से चला आ रहा सीमा विवाद और तहरीक-ए-तालिबान पाकिस्तान (टीटीपी) को नियंत्रित करने में अफगान तालिबान की हिचकिचाहट ने तनाव को चरम पर पहुँचा दिया है। विडंबना यह है कि पाकिस्तान को शायद करजई और गनी सरकारों के तहत अपनी सीमाओं पर बेहतर सुरक्षा मिली थी।

अपनी पश्चिमी सीमाओं पर, तालिबान का ईरान से सामना होता है, जो वैचारिक रूप से उनका समर्थन नहीं करता, लेकिन इतना व्यावहारिक है कि उनकी प्रासंगिकता को समझता है। ईरान ने अफगानिस्तान से अमेरिकी सैन्य शक्ति के बाहर निकलने को एक रणनीतिक वरदान के रूप में देखा है, जिससे वह अपनी पूर्वी सीमा पर पश्चिमी सैन्यीकरण की चिंता से मुक्त हो गया है। हाल ही में ईरान द्वारा दस लाख से अधिक अफगान शरणार्थियों का निर्वासन क्षेत्रीय तनाव की नाजुकता को दर्शाता है, लेकिन यह अभी तक खुले राजनीतिक संकट में नहीं बदला है। अल-शारा को भी ऐसी ही आंतरिक (जैसे ड्रूज और अलावी अल्पसंख्यकों का एकीकरण) और क्षेत्रीय चुनौतियों का सामना करना होगा, और उसे तालिबान के अनुभवों से सबक सीखना होगा।

अंतर्राष्ट्रीय मोर्चे पर, तालिबान ने उतनी ही पहुँच बनाई है जितनी कि उसे अनुमति मिली है। हक्कानी नेटवर्क ने अखुंदजादा को अपनी विदेश नीति से अपेक्षाकृत अलग रखकर चीन, रूस, अमेरिका और यूरोप जैसे देशों को सुरक्षा प्रदान करने (जैसे आईएसकेपी से लड़ना और अल-कायदा को नियंत्रित रखना) को एक सौदेबाजी के रूप में इस्तेमाल किया है। यह एक चतुर रणनीति है जो तालिबान को एक खतरे के बजाय एक आवश्यक सहयोगी के रूप में प्रस्तुत करती है।

आज, बीजिंग और मास्को दोनों तालिबान-नामांकित राजदूतों की मेजबानी करते हैं। इस्लामिक दुनिया, हिचकिचाहट के साथ, तालिबान को व्यवहार में अधिक मान्यता दे रही है, भले ही कागज़ पर न हो। उदाहरण के लिए, यूएई ने 2023 में तालिबान-नियुक्त राजदूत को स्वीकार किया, हालांकि प्रतीकात्मक रूप से तालिबान के झंडे को शपथ ग्रहण समारोह के दौरान पृष्ठभूमि में रखने की अनुमति नहीं दी गई। यह नाजुक संतुलन राजनीतिक आवश्यकता और वैचारिक आपत्तियों के बीच चलता है।

तालिबान की तुलना में, अल-शारा को अपेक्षाकृत आसानी हुई है। अरबों और पश्चिम से मिले समर्थन ने अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों तक पहुँच को आसान बनाया और लगभग स्वचालित रूप से मान्यता का मार्ग प्रशस्त किया।

एल्विश-माहिरा रील या रियल?

रियलिटी टीवी की दुनिया में अफवाहों का बाजार गर्म रहना कोई नई बात नहीं। हाल ही में, 'बिग बॉस ओटीटी 2' के विजेता और यूट्यूबर एल्विश यादव ने अपनी 'रोमांटिक राव साहब' की छवि को हवा देते हुए, 'बिग बॉस 13' फेम माहिरा शर्मा के साथ एक प्यारा सा वीडियो शेयर किया। इस वीडियो में, दोनों हर्षवर्धन राणे और सोनम बाजवा की आने वाली फिल्म 'एक दीवाने की दीवानियत' के गाने 'दीवानियत' को रीक्रिएट करते दिखे। बगीचे में हाथ थामे घूमना, फूल देना और उनकी लाजवाब केमिस्ट्री ने सोशल मीडिया पर आग लगा दी। फैंस ने तुरंत कयास लगाने शुरू कर दिए: क्या ये दोनों स्टार्स डेटिंग कर रहे हैं?

लेकिन ठहरिए! यह सिर्फ एक प्रमोशनल रील का कमाल था। खुद एल्विश यादव को ट्विटर पर आकर इन अफवाहों पर विराम लगाना पड़ा। उन्होंने सीधे वीडियो का जिक्र किए बिना लिखा, "प्रमोशनल रील है दोस्तों इतना सीरियस मत हुआ करो।" हालांकि, उनके इस ट्वीट ने फैंस की थोड़ी मायूसी बढ़ाई होगी, क्योंकि माहिरा के लाल एथनिक सूट और एल्विश के ग्रे कुर्ते में उनकी जोड़ी वाकई दिल जीतने वाली थी।

फिल्म 'एक दीवाने की दीवानियत' के लीड एक्टर हर्षवर्धन राणे ने भी इस प्रमोशनल रील के लिए एल्विश का धन्यवाद किया, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि यह सब फिल्म के प्रचार का हिस्सा था।

एल्विश यादव, जिन्होंने हाल ही में 'लाफ्टर शेफ्स सीजन 2' में करण कुंद्रा के साथ जीत हासिल की थी, और 'एमटीवी रोडीज XX' में भी गैंग लीडर रह चुके हैं, एक बार फिर लाइमलाइट में हैं। वहीं, 'बिग बॉस 13' से पहचान बनाने वाली माहिरा शर्मा भी अक्सर अपनी मौजूदगी दर्ज कराती रहती हैं। तो फिलहाल, 'रोमांटिक राव साहब' एल्विश और माहिरा की कहानी पर्दे पर ही सीमित है, लेकिन उनकी केमिस्ट्री ने फैंस को यह सोचने पर मजबूर कर दिया कि काश यह सच होता!

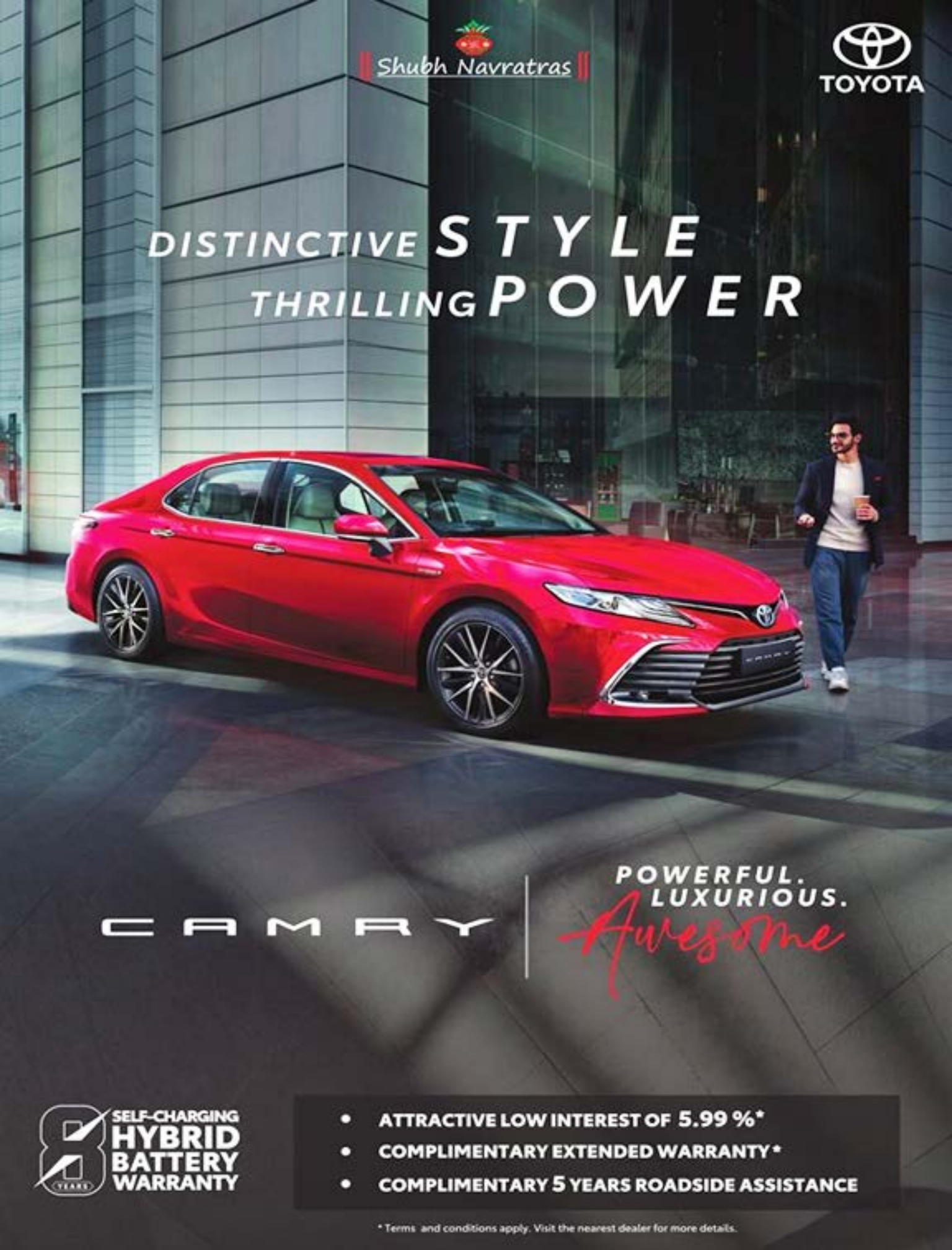

Shubh Navratras
TOYOTA
DISTINCTIVE STYLE
THRILLING POWER
CAMRY
POWERFUL.
LUXURIOUS.
Awesome
SELF-CHARGING HYBRID BATTERY WARRANTY
8 YEARS
• ATTRACTIVE LOW INTEREST OF 5.99 %*
• COMPLIMENTARY EXTENDED WARRANTY*
• COMPLIMENTARY 5 YEARS ROADSIDE ASSISTANCE
* Terms and conditions apply. Visit the nearest dealer for more details.

RNI TITLE CODE : DELENG19447

Experience it. Look at it from all angles. Check out the contours, the craftsmanship, the perfection of form and the waterfall...

Glamour ▪ Convenience ▪ Technology

MARC®
Bathing Luxury

MARC SANITATION PVT. LTD.

A-2, S.M.A. Co-op. Industrial Estate, G.T. Kamal Road, Delhi-110 033
Ph: 27691410, Fax: 011-27691445/27692295 E-mail: info@marcindia.com Website : www.marcindia.com